कृतज्ञता-प्रदर्शन

जीवन-ग्रंथ-माला की लोकप्रियता का इससे अधिक प्रमाण क्या होगा कि अनेक धर्म भाव प्रेमी महानुभाव 'माला' से प्रकाशित होनेवाले ग्रंथों के छपने के पूर्व ही ग्राहक हो जाते हैं। ग्रंथमाला की ओर से हम ऐसे महानुभावों की नामावली देते हुए उन्हें हार्दिक धन्यवाद देते हैं। इसके साथ ही हम अन्य धर्मप्राण महानुभावों से भी प्रार्थना करते हैं कि दया दान द्वारा सत्साहित्य के प्रचार में वे हमारा हाथ बटावें जिससे हम सेवा करने में अधिकाधिक योग दे सकें।

श्रीमान्	सेठ	छगनमलजी गोदावत	छोटी सादड़ी
,,	,,	रिखबदासजी नथमलजी नलवाया	छोटी सादड़ी
,,	,,	गुमानमलजी पृथ्वीराजजी नाहर	छोटी सादड़ी
,,	,,	घेवरचन्दजी जामड़	किशनगढ़
,,	,,	छीतरमलजी मिलापचन्दजी दरड़ा	मदनगञ्ज
,,	,,	लाभचन्दजी चौधरी	जावद
,,	,,	भँवरलालजी रूपावत	जावद
,,	,,	सोभालालजी मोड़ीवाला	जावद
,,	,,	सिश्रीमलजी जौरीमलजी लोढ़ा	अजमेर
,,	,,	श्रीचन्दजी अब्बाणी	ब्यावर
,,	,,	तनसुखदासजी दूगड़	सरदारशहर
,,	,,	खूबचन्दजी चण्डालिया	सरदारशहर
,,	,,	नथमलजी दस्साणी	बीकानेर
,,	,,	हीरालालजी सिंघी	बीकानेर

॥ ॐ ॥

जीवन-ग्रन्थ-माला—पुष्प नं० २

प्रार्थना
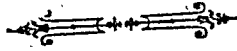
संग्रहकर्त्ता—

पं० छोटेलाल यति

प्रथमावृत्ति ४००० } सन् १९३४ { मूल्य एक आना

प्रकाशक—
जीवन कार्य्यालय,
अजमेर

आदर्श

॥ ॐ ॥

॥ श्री मद्वीरायनमः ॥

॥ अथ चौबीसी पद ॥

दो०—कर्म्म कलंक निवारने, थया सिद्ध महाराज ।
मन वचन काये करी, बन्दुँ तेने आज ॥
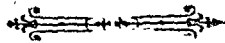
१—श्रीऋषभदेव स्तवन

(उमादे भटियाणी एदेशी)

श्री आदीश्वर स्वामी हो, प्रणमू सिरनामी तुम भणी ।
प्रभू अंतर जामी आप, मोपर म्हैर करीजे हो, मेटी जे चिन्ता मनतणी ॥
म्हारा काटो पुराकृत पाप, श्री आदीश्वर स्वामी हो ॥ टेर ॥१॥
आदि धरम की कीधी हो, भर्तक्षेत्र सर्पणी काल में ।
प्रभु जुगला धरम निवार, पहिला नरवर १ मुनीवर हो २ ।
तीर्थंकर ३ जिनहुआ ४ केवली ५ । प्रभु तीरथ थाप्याँ चार श्री० ॥२॥
मा "मरु देव्या" थारी हो, गज हौदे मुक्ति पधारियाँ ।
तुम जनम्या ही प्रमाण, पिता "नाभिम्हाराजा" हो ।
भव देव तणो करी नर थया, प्रभु पाम्यां पद निरवाण ॥श्री०॥ ३ ॥

भरतादिक सौ नंदन हो, वेपुत्री "ब्राह्मी" "सुंदरी"।
प्रभू ए थारां अंग जात, सघला केवल पाया हो।
समाया अविचल जोत में, कांइ त्रिभुवन में विख्यात ॥श्री०॥ ४ ॥
इत्यादिक वहु तारया हो, जिन कुल प्रभु तुम ऊपना।
कांइ आगम में अधिकार, और असंख्या तारया हो।
उधारया सेवक आपरा, प्रभू सरणा इसाधार ॥ श्री० ॥ ५ ॥
अशरण शरण कहीजे हो, प्रभू विरद विचारो साहिबा।
कांइ अहो गरीब निवाज, शरण तुम्हारी आयो हो।
हूँ चाकर जिन चरना तणो, म्हारी सुणिये अरज अवाज ॥ श्री ॥ ६
तू करुणा कर ठाकुर हो, प्रभु धरम दिवा कर जग गुरू।
कांइ भव दुख दुष्कृत टाल, "विनयचंद" ने आपो हो।
प्रभु निजगुण संपतशास्वती, प्रभू दीनानाथदयाल ॥ श्री ॥ ७ ॥

२—श्री अजितनाथ-स्तवन

(कुविसन मारग माथे रे धिग ए देशी)

श्री जिन अजित, नमो जयकारी, तुम देवन को देवजी।
जय शत्रु राजा ने विजिया राणी को, आतम जात तुमेव जी।
श्री जिन अजित नमो जयकारी ॥ टेर ॥ १ ॥

दूजा देव अनेक जगमें, ते मुझ दाय न आवेजी।
तह मन तह चित्त हमने, तुहीज अधिक सुहावे जी ॥ श्री ॥ २ ॥
सेव्या देव घणा भव भव में, तो पिण गर्ज न सारी जी।
अवकै श्री जिनराज मिल्यौ तूँ, पूरण पर उपकारी जी ॥ श्री ॥ ३ ॥

त्रिभुवन में जस उज्ज्वल तेरो, फैल रह्यो जग जाने जी।
बंदनीक पूजनीक सकल को, आगम एम बखाने जी ॥ श्री ॥ ४ ॥
तू जग जीवन अंतरजामी, प्राण अधार पियारो जी।
सबविधि लायक संत सहायक, भक्त वच्छल विरुद थारोजी॥श्री॥५॥
अष्ट सिद्धि नव निद्धि को दाता, तो सम और न कोई जी।
बधै तेज सेवक को दिन दिन, जेथ-तेथ होई जी ॥ श्री ॥ ६ ॥
अनंत ग्यान दर्शन संपति ले, ईश भयो अविकारी जी।
अविचलभक्ति 'विनयचंद' कूं देवो,तौ जाणू रिझवारीजी ॥श्री॥ ७ ॥

३—श्रीसम्भवनाथ स्तबन

(आज म्हारा पारसजी ने चालो बंदन जइए ऐ देशी)

आज म्हारा संभव जिनके, हित चितसूँ गुण-गास्यां।
मधुर मधुर स्वर राग अलापी, गहरे शब्द गुंजास्यां राज।
आज म्हारा संभव जिनके, हित चितसूँ गुण गास्यां ॥ आ० ॥ १ ॥
नृप "जितारथ" "सेन्या" राणी, तासुत सेवकथास्यां।
नवधा भक्ति भाव सौ करने, प्रेम मगन हुई जास्याँ राज ॥आ०॥ २ ॥
मन वच काय लाय प्रभू सेती, निसदिन सास उसास्यां।
संभव जिनकी मोहनी मूरति हिय निरन्तर ध्यास्यां राज॥आ० ॥ ३ ॥
दीन दयाल दीन बंधव कै, खाना जाद कहास्यां।
तन-धन प्रान समरपी प्रभू को इनपर वेग रिझास्यांराज ॥आ०॥४॥
अष्ट कर्म दल अति जोरावर, ते जीत्या सुख पास्यां।
जालम मोहमार को जामें, साहस करी भगास्यां राज ॥आ०॥ ॥५॥

ऊवट पंथ तजी दुग्गति को, शुभगति पंथ स ास्यां।
आगम अरथ तणे अनुसारे, अनुभव दसा अभ्यास्यां राज आ० ॥ ६ ॥
काम क्रोध मद लोभकपट तजि, निज गुणसूँ लवलास्यां।
विनयचंद संभव जिन तूठ्याँ, आवागवन मिटास्यां राज॥आ०॥७॥

४—अभिनन्दननाथ-स्तवन

(आदर जीव क्षिम्या गुण आदर ऐ देशी)

श्री अभिनंदन, दुःख निकन्दन, वन्दन पूजन योगजी।
आसा पूरो, चिन्ता चूरो आयो सुख, आरोगजी ॥ श्री० ॥ १ ॥
"संवर" राय "सिधारथ" राणी, तेहनो आतम जान जी।
प्रान पियारो साहिब सांचौ, तुही मातने तातजी ॥ श्री ॥ २ ॥
कैइयक सेव करें शंकर की, कैइयक भजें मुरार जी।
गणपति सूर्य उमा कैई सुमरें, हूँ सुमरूँ अविकारजी ॥ श्री ॥ ३ ॥
दैव कृपा सूँ पामें लक्ष्मी, सो इण भव को सुक्ख जी।
तो तूठाँ इन भव पर भव में, कदी न व्यापै दुःखजी ॥ श्री ॥ ४ ॥
जदपी इन्द्र नरिन्द्र निवाजें, तदपी करन निहालजी।
तूँ पुजनीक नरिन्द्र इन्द्रको, दीन दयाल कृपाल जी ॥ श्री ॥ ५ ॥
जब लग आवागमन न छूटे, तब लग ए अरदासजी।
सम्पति सहित ज्ञान समकित गुण, पाऊँ दृढ़ विसवासजी ॥श्री॥ ६ ॥
अधम उधारन विरुद तिहारो, जोवो इण संसारजी।
लाज 'विनयचन्द'की अब तोनें, भवनिधि पार उतारजी। श्री॥ ७ ॥

५—श्री सुमतिनाथ-स्तवन

(श्रीसीतल जिन साहिबाजी ऐ देशी)

सुमति जिणेसर साहिबाजी, "मेघरथ" नृप नो नंद ।
"सुमंगला" माता तणो जी, तनय सदा सुखकंद ॥
प्रभू त्रिभुवन तिलोंजी ॥ १ ॥
सुमति सुमति दातार, महा महिमानिलोजी ।
प्रणमूँ बार हजार, प्रभू त्रिभुवन तिलोजी ॥ २ ॥
मधुकर नौ मन मोहियोजी, मालती कुसुम सुवास ।
त्यूँ मुज मन मोह्यो सही, जिन महिमा सुविमास ॥प्रभु०॥ ३ ॥
ज्यूँ पङ्कज सूरज मुखीजी, बिकसै सूर्य प्रकाश ।
त्यूँ मुज मनड़ो गह गहै, सुनि जिन चरित हुलास॥प्रभू०॥ ४ ॥
पपइयो पीउ पीउ करेजी, जान वर्षाऋतु मेह ।
त्यूँ मो मन निसदिन रहै, जिन सुमरन सूँ नेह ॥प्रभू०॥ ५ ॥
काम भोगनी लालसाजी, थिरता न धरे मन्न ।
पिण तुम भजन प्रतापथी, दाझै दुरमति बन्न ॥प्रभु०॥ ६ ॥
भवनिधि पार उतारियेजी, भक्त बच्छल भगवान ।
'बिनयचन्दकी' वीनतो, थें मानो कृपानिधान ॥ प्रभु० ॥७॥

६—श्री पद्मप्रभु स्तवन

(स्याम कैसे गज का फन्द छुड़ायो ऐ देशी)

पद्म प्रभु पावन नाम तिहारो, पतित उद्धारन हारो ॥टेर॥
जदपि धीमर भील कसाई, अति पापिष्ट जमारो ।
तदपि जीव हिंसा तज प्रभू भज, पावै भवनिधि पारो ॥पद्म॥ १ ॥

गौ ब्राह्मण प्रमदा बालककी, मोठी हत्याच्यारो ।
तेहनो करणहार प्रभू-भजने, होत हत्यासूँ न्यारो ॥पदम॥ २॥
वेश्या चुगल चंडाल जुवारी, चोर महा बट मारो ।
जो इत्यादि भजै प्रभु तोने, तो निवृर्तें संसारो ॥पदम॥ ३॥
पाप कराल को पुञ्ज वन्यौ, अति मानो मेरु अकारो ।
ते तुम नाम हुताशन सेती, सहजा प्रजलत सारो ॥पदम॥ ४॥
परम धर्म को मरम महारस, सो तुम नाम उच्चारो ।
या सम मंत्र नहीं कोई दूजो, त्रिभुवन मोहन गारो ॥पदम॥ ५॥
तो सुमरण विन इण कलयुग में, अवर न को आधारो ।
मैं वारि जाऊँ तो सुमरन पर, दिन दिन प्रीत वधारो ॥पदम॥ ६॥
"सुषमा राणी" को अंगजात तूँ, "श्रीधर" राय कुमारो ।
'विनयचन्द' कहे नाथ निरञ्जन, जीवन प्राण हमारो ॥पदम०॥७॥

७—श्री सुपार्श्वनाथ-स्तवन

(प्रभुजी दीनदयाल सेवक सरणे आयो ऐदेशी)

"प्रतिष्ट सैन" नरेश्वर को सुत, "पृथवी" तुम महतारी ।
सुगुण सनेही साहिब साँचो, सेवक ने सुखकारी ॥
श्री जिनराज सुपास, पूरो आस हमारी ॥ टेर ॥ १ ॥
धर्म काम धन मोक्ष इत्यादिक, मन वांछित सुख पूरो ।
वार बार मुझ विनती येही, भवभव चिंता चूरो ॥श्रीजिन०॥ २ ॥
जगत् शिरोमणि भक्ति तिहारी, कल्पवृक्ष सम जाणू ।
पूरणब्रह्म प्रभू परमेश्वर, भवभव तुम्हें पिछाणू ॥श्रीजिन०॥ ३ ॥

हूँ सेवक तूँ साहिब तेरो, पावन पुरुष विज्ञानी ।
जनम-जनम जित-तिथ जाऊँ तो, पालो प्रीति पुरानी ॥श्रीजिन०॥४॥
तारण-तरण अरु असरण-सरण को, बिरुद इसो तुम सोहे ।
तो सम दीनदयाल जगत में, इन्द्र नरिन्द्रन को है ॥श्रीजिन०॥ ५॥
शम्भु रमण बड़ो समुद्रो में, शैल सुमेर बिराजै ।
तू ठाकुर त्रिभुवनमें मोटो, भक्ति किया दुख भाजै ॥श्रीजिन०॥ ६॥
अगम अगोचर तू अविनाशी, अलप अखंड अरूपी ।
चाहत दरस 'बिनयचंद' तेरो, सच्चिदानन्द स्वरूपी ॥श्रीजिन०॥ ७॥

८—श्री चन्द्रप्रभ-स्तवन

(चौकनी देशी)

जय जय जगत शिरोमणी, हूँ सेवक ने तूँ धणी ।
अब तौसूँ गाढ़ी बणी, प्रभू आशा पूरो हमतणी ॥ टेर ॥
मुझे म्हेर करो, चन्द प्रभू जग जीवन अन्तरजामी ।
भव दुःख हरो, सुणिये अरज हमारी त्रिभुवन स्वामी । जय०॥ १॥
"चन्दपुरी" नगरी हती, "महासैन" नामा नरपति ।
राणी "श्रीलखमा" सती, तसु नन्दन तूँ चढ़ती रती॥जय०॥२॥
तूँ सरवज्ञ महाज्ञाता, आतम अनुभव को दाता ।
तो तूठां लहिये साता, प्रभु धन्य २ जगमें तुम ध्याता ॥जय०॥ ३॥
शिव सुख प्रार्थना करसूँ, उज्ज्वल ध्यान हिये धरसूँ ।
रसना तुम महिमा करसूँ, प्रभू इण विध भवसागरसे तिरसूँ ॥जय०॥४॥
चंद चकोरन के मन में, गाज अवाज होवे घन में ।
पिय अभिलाषा ज्यों त्रियतनमें, ज्यों वसियो तू मो चित वनमें ५

जो सूनजर साहिब तेरो, तो मानो विनती मेरी ।
काटो करम भरम वेरी,प्रभु पुनरपि नहिं परूँ भव फेरी।।जय०।। ६ ।।
आतम-ज्ञान दशा जागी, प्रभु तुम सेती लवलागी ।
अन्य देव भ्रमना भागी, 'विनयचंद' तिहारो अनुरागी।।जय०।।७।।

६—श्री पुष्पदन्त-स्तवन

(बुढ़ापो वेरी आविया हो ए देशी)

"काकंदी" नगरी भली हो, "श्री सुग्रीव" नृपाल ।
"रामा" तसु पट रागनी हो, तस सुत परम कृपाल ।।
श्री सुविध जिणेसर वंदिये हो ।। टेर ।। १ ।।

त्यागी प्रभुना राजनी हो, लीधो संजम भार ।
निज आतम अनुभव था हो, पाम्या प्रभु पद अविकार ।।श्री०।। २ ।।
अष्ट कर्म नो राजवी हो, मोह प्रथम क्षय कीन ।
सुध समकित चारित्रनो हो, परम क्षायक गुणलीन ।।श्री०।। ३ ।।
ज्ञानावरणी दर्शणावरणी हो, अन्तराय कीयो अन्त ।
ज्ञान दरशन बल ये त्रिहूँ हो, प्रगट्या अनन्तानन्त ।।श्री० ।। ४ ।।
अव्याबाध सुख पामिया हो, वेदनी करम खपाय ।
अव गाहण अटल लही हो, आयु क्षै करन जिनराय ।।श्री०।। ५ ।।
नाम करम नो क्षय करी हो, अमूर्तिक कहाय ।
अगुरु लघुपणो अनुभव्यो हो, गोत्र करम मुकाय ।।श्री०।। ६ ।।
आठ गुणा कर ओलख्यो हो, जोती रूप भगवंत ।
"विनयचंद" के उरवसो हो, अहोनिश प्रभु पुष्पदंत ।।श्री० ।।७।।

१०—श्री शीतलनाथ-स्तवन

(जिंदवारी देशी)

"श्रीदृढ़रथ" नृप पिता, "नंदा" थारी माय ।
रोम-रोम प्रभू मो भणी, सीतल नाम सुहाय ॥
जय जय जिन त्रिभुवन धणी ॥ टेर ॥ १ ॥
करुणानिध करतार, सेव्यां सुरतरु जेहवो ।
वाँछित सुख दातार ॥ जय ॥ २ ॥
प्राण पियारो तू प्रभू, पति भरता पति जेम ।
लगन निरंतर लगरही, दिनदिन अधिको प्रेम ॥जय०॥ ३ ॥
शीतल चंदन नी परें, जपता निशदिन जाप ।
विषै कषाय न ऊपने, मेटौ भव-दुख ताप ॥जय०॥ ४ ॥
आरत रुद्र परिणाम थी, उपजै चिन्ता अनेक ।
ते दुख कापो मानसी, आपौ अचल विवेक ॥जय०॥ ५ ॥
रोगादिक क्षुधा तृषा, शस्त्र अशस्त्र प्रहार ।
सकल शरीरी दुःख हरौ, दिलसुँ बिरुद विचार ॥जय०॥ ६ ॥
सुप्रसन्न होय शीतल प्रभू, तू आसा बिसराम ।
"विनयचंद" कहै मो भणी, दीजै मुक्ति मुकाम ॥ जय० ॥७॥

११—श्री श्रेयाँसनाथ-स्तवन

(राग काफी देसी होरी की)

श्री श्रंस जिनन्द सुमररे ॥ टेर ॥
चेतन जाण कल्याण करन को, आन मिल्यो अवसररे ।
शास्त्र प्रमान पिछान प्रभ गुन, मन चंचल थिर कररे ॥श्री०॥ १ ॥

सास उसास विलास भजन को, दृढ़ विस्वास पकररे ।
अजपाभ्यास प्रकाश हिये बिच, सो सुमरन जिनवररे ॥श्री०॥ २ ॥
कंद्रप क्रोध लोभ मद मच्छर, यह सबही पर हररे ।
सम्यक्‌दृष्टि सहज सुख प्रगटै, ज्ञान दशा अनुसररे ॥श्री०॥ ३ ॥
भूँठ प्रपंच जोवन तन धन अरु, सजन सनेही घररे ।
छिनमें छोड़ चले पर भव कूँ, बंध सुभासुभ थिररे ॥श्री०॥ ४ ॥
मानस जनम पदारथ जिनकी, आसा करत अमररे ।
ते पूरब सुकृत कर पायो, धरम-मरम दिल धररे ॥ श्री० ॥ ५ ॥
"बिश्नसैन" नृप "विस्नाराणी" को, नंदन तू न बिसररे ।
सहज मिटै अज्ञान अविद्या, मुक्त पंथ पग भररे ॥ श्री० ॥ ६ ॥
तू अविकार बिचार आतम गुन, भव-जंजाल न पररे ।
पुद्गल चाय मिटाय विनयचन्द, तू जिनते न अवररे ॥ श्री० ॥ ७ ॥

१२—श्रीवासुपूज्य-स्तवन

(फूथली देह पलक में पलटे ए देशी)

प्रणमूँ वास पूज्य जिन नायक, सदा सहायक तू मेरो ।
विपम वाट घाट भयथानक, परमाश्रय सरनो तेरो ॥ प्रणमू०॥ १ ॥
खलदल प्रबल दुष्ट अति दारुण, जो चौ तरफ दिये घेरो ।
तौ पिण कृपा तुम्हारी प्रभुजी, अरियन होय प्रगटै चेरो ॥ प्र० ॥ २ ॥
विकट पहार उजार विचाले, चोर कुपात्र करे हेरो ।
तिण विरियां करिये तो सुमरण, कोई न छीन सके डेरो ॥ प्र० ॥ ३ ॥
राजा बादशाह जो कोई कोपे, अति तकरार करे छेरो ।
तदपी तू अनुकूल होय तो, छिन में छुट जाय केरो ॥ प्रण०॥ ४ ॥

राक्षस भूत पिशाच डांकिनी, साँकनी भय न आवे नेरौ ।
दुष्ट मुष्ट छल छिद्र न लागे, प्रभ तुम नाम भज्यां गहरो ॥प्र०॥ ५ ॥
विस्फोटक कुष्टादिक सङ्कट, रोग असाध्य मिटे देहरो ।
विष प्यालो अमृत होय प्रगमें, जो विश्वास जिनंद केरो ॥प्र०॥ ६ ॥
मात 'जया' 'वसु' नृप के नन्दन, तत्व जथारथ बुध प्रेरौ ।
वे कर जोरि बिनयचंद बिनवे, बेग मिटे मुझ भव फेरो ॥ प्रण०॥७॥

१३—श्रीविमलनाथ-स्तवन

(अहो शिवपुर नगर सुहावणो ए देशी)

बिमल जिनेश्वर सेविये, थारी बुध निर्मल हो जायरे जीवा ।
विषय-विकार बिसार ने, तूँ मोहनो करम खपाय रे ।
जीवा बिमल जिनेश्वर सेविये ॥ १ ॥
सूक्षम साधारण पणे, परतेक बनस्पती मांयरे जीवा ।
छेदन भेदन तेसही, मर-मर ऊपज्यो तिण कायरे ॥जी०॥ २ ॥
काल अनंत तिहांगम्यो, तेहना दुख आगम थी सँभाल रे ।
पृथ्वी अप्प तेउ वायु में, रह्यो असंख्या तो का‌लरे ॥जी०॥ ३ ॥
एकेन्द्री सूँ बेंद्री थयो, पुन्याई अनंतो वृधरे जीवा ।
सन्नीपचेंद्री लगें पुनबध्या, अनंतानंत प्रसिद्ध रे ॥जीवा ॥ वि०॥ ४ ॥
देव नरक तिरयंच में, अथवा मानव भवनीचरे जीवा ।
दीन पणे दुख भोगव्या, इण पर चारों गति बीचरे ॥जी०॥ ५ ॥
अबके उत्तम कुल मिल्यो, भेट्या उत्तम गुरू साधुरे जीवा ।
सुण जिन वचन सनेह से, समकित व्रत शुद्ध आराधरे ॥जी०॥ ६ ॥
पृथ्वीपति 'कृतिभानु' को, 'सामाराणी' को कुमाररे जीवा ।
"बिनयचंद" कहै ते प्रभू, सिर सेहरो हिवडारो हाररे ॥जी०॥७॥

१४—श्रीअनन्तनाथ-स्तवन

(वेगा पधारोरे म्हेल थी एदेशी)

अनंत जिनेश्वर नित नमो, अद्भुत जोत अलेख ।
ना कहिये ना देखिये, जाके रूप न रेख ॥अनंत॥ १ ॥
सुक्षम थी सूक्षम प्रभू, चिदानंद चिदरूप ।
पवन शब्द आकाशथी, सुक्षम ज्ञान सरूप ॥अनंत॥ २ ॥
सकल पदारथ चिन्तवूं, जेजे सुक्षम जोय ।
तिणथी तू सूक्षम महा, तो सम अवरन कोय ॥अनंत॥ ३ ॥
कवि पंडित कह-कह थके, आगम अर्थ विचार ।
तो पिण तुम अनुभव तिको, न सके रसना उचार ॥अनंत॥ ४ ॥
पभणे श्रीमुख सरस्वती, देवी आपो आप ।
काह न सके प्रभू तुम सत्ता, अलख अजपा जाप ॥अनंत॥ ५ ॥
मन बुध वाणी तो विषे, पहुंचे नहीं लगार ।
साक्षी लोकालोकनो, निरविकल्प निराकार ॥अनंत॥ ६ ॥
मातु सुजसा' 'सिंहरथ' पिता, तासु सुत 'अनंत' जिनंद ।
"विनयचंद" अब ओलख्यो, साहिब सहजानन्द ॥अनंत॥ ७ ॥

१५—श्री धर्मनाथ-स्तवन

(आज नहेजोरे दीसै नाहलो एदेशी)

धरम जिनेश्वर मुज हिवडै वसो, प्यारो प्राण समान ।
कबहूँ न विसरूं हो चितारूं सही, सदा अखंडित ध्यान ॥ध०॥ १ ॥
ज्यूं पनिहारी कुम्भ न वीसरे, नट वो वरत निदान ।
पलक न विसरे हो पदमनिपियु भणी, चकवी न विसरे भान ॥ध०॥

ज्यूं लोभी मन धनकी लालसा, भोगी के मन भोग ।
रोगी के मन माने औषधी, जोगी के मन जोग ॥ध०॥ ३ ॥

इण पर लागी हो पूरण प्रीतडी, जाव जीव परियंत ।
भव-भव चाहूँ हो न पड़े आंतरो, भय भंजन भगवंत ॥ध०॥ ४ ॥

काम क्रोध मद मच्छर लोभ थी, कपटी कुटिल कठोर ।
इत्यादिक अवगुण कर हूँ भर्यो, उदय कर्मके जोर । ध०॥ ५ ॥

तेज प्रताप तुमारो प्रगटै, मुज हिवड़ा में आय ।
तो हूँ आतम निज गुण संभालने अनंत बली कहियाय ॥ध०॥ ६ ॥

'भानू' नृप 'सुव्रत्ता' जननी तणो, अङ्ग जाति अभिराम ।
विनयचंद ने बल्लभ तू प्रभू, सुध चेतन गुण धाम ॥ध०॥ ७ ॥

१६—श्री शांतिनाथ-स्तवन

(प्रभूजी पधारो हो नगरी हमतणी एदेशी)

"विश्व सैन" नृप "अचला" पटरानी ॥
तासु सुत कुल सणगार-हो सौभागी ।
जनमतां शान्ति करी निज देसमें ॥
मरी मार निवार हो सौभागी ।
शान्ति जिनेश्वर साहिब सौलमां ॥ १ ॥
शान्ति दायक तुम नाम हो सोभागी ।
तन मन बचन सुध कर ध्यावतां ॥
पूरे सघली आस हो सोभागी ॥ २ ॥
विघन न व्यापे तुम सुमरन कियां ।
नासै दारिद्र दुःख हो, सौभागी ॥

अष्ट सिद्धि नव निद्धि पग पग मिलै ।
प्रगटै सगला सुक्ख हो, सौभागी ॥ ३ ॥
जेहने सहायक शान्ति जिनंद तूं ।
तेहनै कमीय न काय हो सोभागी ॥
जे जे कारज मन में तेवढ़ै ।
ते-ते सफला थाय हो, सोभागी ॥ ४ ॥
दूर दिसावर देश प्रदेश में ।
भटके भोला लोक हो, सोभागी ॥
सानिधकारी सुमरन आपरो ।
सहज मिटे सहू सोक हो ॥ सोभागी ॥ ५ ॥
आगम - साख सुणी छै एहवी ।
जो जिण-सेवक होय हो ॥ सोभागी ॥
तेहनी आसा पूरै देवता ।
चौसठ इन्द्रादिक सोय हो । सोभागी ॥ ६ ॥
भव-भव अन्तरयामी तुम प्रभू ।
हमने छै आधार हो ॥ सोभागी ॥
वेकर जोड़ "विनयचंद" विनवै ।
आपौ सुख श्री कार हो ॥ सोभागी ॥ ७ ॥

१७—श्री कुन्थूनाथ-स्तवन

(रेखता)

कुंथ जिनराज तूं ऐसो, नहीं कोई देवतूँ जैसो ।
त्रिलोक नाथतूं कहिये, हमारी बांह दृढ़ गहिये ॥ कुंथ ॥ १ ॥

भवोदधि डूबतो तारो, कृपानिधि आसरो थारो।
भरोसा आपका भारी विचारो विरुद उपकारी ॥ कुंथ० ॥ २ ॥
उमाहो मिलन को तोसे, न राखो आंतरो मोसे।
जैसी सिद्ध अवस्था तेरी, तैसी चेतन्यता मेरी ॥ कुंथ० ॥ ३ ॥
करम भ्रम जाल को दपट्यौ, विषय सुख ममत में लपट्यौ।
भ्रम्यौ हूँ चहूँ गति माहीं, उदैकर्म भ्रम की छाँही ॥कुंथ० ॥ ४ ॥
उदय को जोर है जोलूं न छूटै विषय सुख तौलूँ।
कृपागुरुदेव की पाई, निजातम भावना भाई ॥ कुंथ० ॥ ५ ॥
अजब अनुभूति उरजागी, सुरति निज स्वरूप में लागी।
तुम्हि हम एकता जाणू—, द्वैत भ्रम-कलपना मानूं ॥ कुंथ ॥ ६ ॥
"श्री देवी" "सुर" नृप नन्दा, अहो सरवज्ञ सुख कन्दा।
"विनयचन्द" लीन तुम गुन में, न व्यापै अविद्या मन में ॥कुंथ॥७॥

१८—श्री अरहनाथ-स्तवन

(अलगी गिरानी एदेशी)

अरहनाथ अविनासी शिव सुख लीधौ,
बिमल विज्ञान बिलीसी। साहिब सीधौ० ॥ १ ॥
तू चेतन भज अरह नाथने ते प्रभु त्रिभुवन राय।
तात 'सुदर्शन' 'देवी' माता, तेहनों पुत्र कहाय साहिब सीधो ॥२॥
कोइ जतन करता नहीं पामें, एहवी मोटी माम।
ते जिन भक्ति करी नै लहिये, मुक्तिअमोलक ठाम ॥ सा० ॥ ३ ॥

समकित सहित कियां जिन भगती, ज्ञानदरसन चारित्र।
तप वीरज उपयोग तिहारा प्रगटे परम पवित्र ॥ सा० ॥ ४ ॥
सो उपयोग सरूप चिदानंद जिनवर ने तू एक।
द्वत अविद्या विभ्रम मेटो वाधै शुद्ध विवेक ॥ सा० ॥ ५ ॥
अलख अरूप अखण्डित अविचल, अगम अगोचर आप।
निरविकल्प निकलंक निरंजन, अद्भुत जोति अमाप ॥ सा० ॥ ६ ॥
ओलख अनुभव अमृत वाको, प्रेम सहित रस पीजै।
हूँ-तूँ छोड़ "विनयचन्द" अंतस आतम-राम रमीजे ॥ सा० ॥७॥

१६—श्री मल्लिनाथ-स्तवन

(लावणी)

मल्लि जिन बाल ब्रह्मचारी।
"कुम्भ" पिता "परभावती" मइया तिनकी कुँवारी ॥टेर॥
मानी कूंख कंदरा मांही उपना अवतारी।
मालती कुसुम-मालनी वांछा जननी उरधारी ॥ म० ॥ १ ॥
तिणथी नाम मल्लि जिन थाप्यो, त्रिभुवन प्रिय कारी।
अद्भुत चरित तुम्हारो प्रभुजी वेद धर्‌यो नारी। म० ॥ २ ॥
परणन काज जान सज आए, भूपति छैः भारी।
मिथिला पुरि घेरि चौ-रफा, सेना विस्तारी ॥ म० ॥ ३ ॥
राजा "कुम्भ" प्रकाशी तुमपे, बीती विधि सारी।
छहुं नृप जान सजी तो परणन, आया अहंकारी ॥ म० ॥ ४ ॥
श्रीमुख धीरप दीधि पिताने, राखो हुशियारी।
पुतली एक रची निज आकृति, थोथी ढकणारी ॥ म० ॥ ५ ॥

भोजन सरस भरी सा पुतली, श्रीजिण सिणगारी।
भूपति छहूँ बुलाय मंदिर, बिच बहु दिना पारी ॥म०॥ ६॥
पुतली देख छहूँ नृप मोह्या, अवसर बिचारी।
ढांक उघार लीनो पुतली को, भबक्यो अन्न भारी ॥म०॥ ७॥
दुसह दुगन्ध सही न जावे, ऊठ्या नृपहारी।
तब उपदेश दियो श्रीमुख से, मोह दशा टारी ॥म०॥ ८॥
महा असार उदारीक देही, पुतली इव प्यारी।
संग किया पटकै भव-दुःख में, नारि नरक वारी ॥म०॥ ९॥
नृप छहूँ प्रति बोधे मुनि होय, सिधगति संभारी।
"बिनैचंद" चाहत भव भव में, भक्ति प्रभू थारी ॥म०॥१०॥

२०—श्री मुनि सुव्रतनाथ-स्तवन

(चेतरे चेतरे मानवी ऐदेशी)

श्री मुनि सुव्रत साहिबा, दीनदयाल देवाँ तणा देव कै।
तारण तरण प्रभू तो भणी, उज्वल चित्त सुमरूं नितमेवकै ॥१॥
हूँ अपराधी अनादिको, जनम-जनम गुना किया भरपूर कै।
लूटिया प्राण छै कायना, सेविया पाप अठार करू रकै ॥२॥
पूरव अशुभ कर्त्तव्यता ते हमनी प्रभू तुम न बिचारकै।
अधम उधारण विरुद्ध छै, सरण आयो अब कीजिये सारकै ॥३॥
किंचित पुन्यपर भावथी, इण भव ओलिख्यो श्रीजिन धर्मकै।
निवर्तू नरक निगोद थी, एवही अनुग्रह करो पर ब्रह्मकै ॥४॥
साधुपणो नहिं संग्रह्यो, श्रावक व्रत न किया अंगीकारकै।
आदस्या तो न अराधिया, तेहथी रुलियो हूँ अनंत संसारकै ॥५॥

अब समकित व्रत आदर्‌या, तद्‌पि अराधक उतरूं भव पारकै ।
जनम जीतव सफलो हुवै, इण पर विनवूं बार हजारकै ॥६॥
"सुमति" नराधिप तुम पिता, धन २ श्री "पद्‌मावती" मायकै ।
तसु सुत त्रिभुवन तिलक तूं, वंदत "बिनैचंद" सीस नवाय कै ॥७॥

२१—श्री नमिनाथ-स्तवन

(सुणियोरे वाला कुटिल मंझारी तोता ले गई)

"विजय" सैन नृप "विप्राराणी", नेमीनाथ जिन जायो ।
चौसठ इन्द्र कियो मिल उत्सव, सुर नर आनंद पायोरे ॥
सुज्ञानी जीवा भजले जिन इक वीसमों ॥ टेर ॥ १ ॥

भजन किया भव-भवना दुष्कृत, दुक्ख दुभाग्य मिट जावे ।
काम, क्रोध, मद, मच्छर, त्रिसना, दुरमति निकट न आवैरे ॥सु०॥२॥

जीवादिक नव तत्व हिये धर, हेय ज्ञेय समझीजे ।
तजी उपादेय ओलखने, समकित निरमल कीजैरे ॥सु०॥ ३ ॥

जीव, अजीव, वंध, एतीनूं, ज्ञेय जथारथ जानो ।
पुन्य पाप आश्रव परहरिये, हेय पदारथ मानों रे ॥सु०॥ ४ ॥

संवर मोक्ष निर्जरा निज गुण, उपादेय आदरिये ।
कारण कारज समज भली विध, भिन-भिन निरणो करियेरे ॥सु०॥५॥

कारण ज्ञान सरूप जिवको, कारज क्रिया पसारो ।
दोनूं को साखी सुध अनुभव, आपो खाज तिहारो रे ॥सु०॥ ६ ॥

तू सो प्रभू प्रभू सो तू है, द्वैत कल्पना मेटो ।
सतचित आनंद विनैचंद, परमातम पद भेटोरे ॥सुज्ञानी०॥ ७ ॥

२२—श्री नेमिनाथ-स्तवन

(नगरी खूब वणी छै जी एदेशी)

"समुद्र" बिजय सुत श्री नेमीश्वर, जादव कुल को टीको ।
रतन कुक्ष धरणी "सिवा देवी", जेहनो नंदन नीको ॥
श्रीजिनमोहन गारो छै, जीवन प्राण हमारो छै ॥ टेर॥श्री०॥ १ ॥
सुन पुकार पशु की करुणा कर, जानिजगत् सुख फीको ।
नव भव नेह तज्यो जोबन में, उग्रसैन नृप धीको ।श्री०॥ २ ॥
सहस्र पुरुष सों संजम लीधो, प्रभुजी पर उपकारी ।
धन धन नेम राजुलकी जोड़ी, महा बाल ब्रह्मचारी ॥श्री०॥ ३ ॥
बोधानंद सरुपानंद में, चित एकाग्र लगायो ।
आतम-अनुभव दशा अभ्यासी,शुक्ल ध्यान जिन ध्यायो ॥श्री०॥ ४ ॥
पूर्णानंद केवली प्रगटे, परमानंद पद पायो ।
अष्टकर्म छेदी अलवेसर, सहजानंद समायो ॥श्री०॥ ५ ॥
नित्यानंद निराश्रय निश्चय, निर्विकार निर्वाणी ।
निरांतक निरलेप निरामय, निराकार वरनाणी ॥श्री०॥ ६ ॥
एवहो ध्यान समाधि संयुक्त, श्री नेमीश्वर स्वामी ।
पूरण कृपा "बिनैचंद" प्रभू की, अबते ओलखपामी ॥श्री०॥७॥

२३—श्री पार्श्वनाथ-स्तवन

(जीवरे शीलतणो कर संग)

"अस्वसैन" नृप कुल तिलोरे, "वामा" देवो नो नंद ।
चिंतामणि चित्त में बसेरे दूर टले दुःख द्वंद ॥
जीवरे तू पार्श्व जिनेश्वर वन्द ॥ टेर ॥ १ ॥

जड़ चेतन मिश्रित पणैरे, करम सुभाशुभ थाय ।
ते विभ्रम जग कलपनारे, आतम अनुभव न्याय ॥जीवरे०॥ २ ॥
वैहमी भय माने जथारे, सूने घर वैताल ।
त्यूं मूरख आतम विषरे, मान्यो जग भ्रम जाल ॥जीवरे०॥ ३ ॥
सरप अंधारै रासडीरे, रूपो सीप सम्कार ।
मृग तृषना अंबू मृषारे, त्यूं आतम संसार ॥जीवरे॥ ४ ॥
अग्नि विषै ज्यों मणी नहीं रे, मणी में अग्नि न होय ।
सुपने की संपति नहीं ज्युं. आगम में जग जोय ॥जीवरे०॥ ५ ॥
बांज पुत्र जनमे नहीं रे, सींग शशै सिर नाहीं ।
कुसुम न लागै व्योम मेंरे, ज्यूं जग आतम मांहि ॥जीवरे०॥ ६ ॥
अमर अजोनी आतमारे, हूँ निश्चै तिहुँ काल ।
"विनैचंद" अनुभव जगीरे, तू निज रूप सम्हाल ॥जीवरे०॥ ७ ॥

२४—श्री महावीर-स्तवन

(श्रीनवकार जपो मन रंगे एदेशी)

धन धन जनक 'सिद्धारथ' राजा धन, 'त्रसलादे' मातरे प्राणी ।
ज्यां सुत जायो गोद खिलायो, 'वर्धमान' विख्यातरे प्राणी ॥
श्री महावीर नमो वरनाणी, शासन जेहनो जाणरे प्राणी ॥ १ ॥
प्रवचन सार विचार हिया में, कीजै अरथ प्रमाणरे ॥प्रा०॥श्री०॥ २ ॥
सूत्र विनय आचार तपस्या, चार प्रकार समाधिरे प्राणी ।
ते करिये भव सागर तरिये, आतम भाव अराधिरे प्राणी ॥श्री०॥ ३ ॥
ज्यों कंचन तिहुँ काल कहीजै, भूषण नाम अनेकरे प्रा० ।
त्यों जगजीव चराचर जोनी, है चेतन गुन एकरे प्राणी ॥श्री॥ ४ ॥

अपणो आप विषै थिर आतम सोहं हंस कहायरे प्रा० ।
केवल ब्रह्म पदारथ परिचय, पुद्गल भरम मिटायरे प्राणी ।।श्री०।। ५ ।।

शब्द रूप रस गंध न जामें, ना सपरस तप छाहरे प्रा० ।
तिमर उद्योत प्रभा कछु नाहीं, आतम अनुभव माहिरे प्रा०।।श्री।। ६ ।।

सुख दुःख जीवन मरन अवस्था, ऐ दस प्राण संगारते प्रा० ।
इनथी भिन्न बिनैचंद रहिये, ज्यौं जलमें जल जातरे प्रा०।।श्री।। ७ ।

॥ कलश ॥

चौबीस तीरथ नाथ कीरति, गावतांमन गह गहै ।
कुमट गोकुलचन्द नन्दन, 'बिनयचन्द' इणपर कहै ।।
उपदेश पूज्य हमीर मुनिको, तत्व निज उरमें धरी ।
उगणीस सो छैः के छमच्छर, चतुर्विंशति स्तुति इम करी ।।

भजन

जीवन गण देखो अपना रूप ।
यह संसार न मित्र तुम्हारा, भूलो मती स्वरूप ।।
जड़-वस्तू की रचना यह जग, तुम चैतन्य अनूप ।
नहीं तुम्हारी इसकी समता, ज्यों छाया अरु धूप ।।
जग की सब सम्पति ऐसी है, ज्यों गोबर के पूप ।
बार न लागत बिगड़त सुधरत, क्षणहि रङ्क, क्षण भूप ।।
मानुष जन्म न खोओ अकारथ, पड़ि विषयन के कूप ।
धर्म सार रखि पाप कूट को, छिटकाओ ज्यों सूप ।।
मोह-जाल पड़ि स्वतन्त्रता को, मति राखो तुम गूप ।
तजि घर काटन को भवचक्कर, पकड़ो धर्म को यूप ।।

भजन

धर्म सा नहीं कोई बलवान, धर्म में होती शक्ति महान ।
कैसा भी हो कष्ट धैर्य से, करे धर्म का ध्यान ॥
कहां गये वे कष्ट नहीं है, यह भी पड़ता जान ॥ १ ॥
भव सागर के घोर दुःख से, जब घबराते प्राण ।
ऐसे समय में एक धर्म ही जीव को देता त्राण ॥ २ ॥
लेना देना पुत्र रोग दुःख, मान और अपमान ।
ये सब चिंतामिट जावे यदि, करो धर्म सम्मान ॥ ३ ॥
धर्म सामने उपाय दूजे हैं, सब धूर समान ।
ऐसा समझ धर्म को "दीन्दित" हृदय में दो स्थान ॥ ४ ॥

राग टोडी-द्रुत एक ताल (चार ताल)

दीन को दयालु दानि दूसरो न कोऊ ।
जासों दीनता कहौं, हौं देखौं दीन सोऊ ॥ १ ॥

सुर नर मुनि असुर नाग, साहिब तो घनेरे ।
तौलौं, जौलौं रावरे न नेकु नयन फेरे ॥ २ ॥

त्रिभुवन तिहुँ काल विदित वदति वेद चारी ।
आपि अंत मध्य राम ! साहिबी तिहारी ॥ ३ ॥

तोहि मांगि माँगनो न मांगनो कहायो ।
सुनि सुभाउ सील सुजस जाचन जन आयो ॥ ४ ॥

पाहन, पसु विदय, विहँग अपने कर लीन्हें ।
महाराज दसरथ के ? रंक राम कीन्हें ॥ ५ ॥

तू गरीब को निबाज, हौं गरीब तेरो ।
बारक कहिये कृपालु ? तुलसीदास मेरो ॥ ६ ॥

भजन

सन्त को लो मत छोटा जान, सन्त ही से होते भगवान ।
महाव्रतों को दुःख सहपालें तनिक न आरत ध्यान ।
स्वश्रम से जो प्राप्त किया वह तुम्हें सुनाते ज्ञान ॥ १ ॥
पहले तुमको नहीं सुनाते, जब लें खुद पहचान ।
निज आतम से अनुभव करके देते ज्ञान का दान ॥ २ ॥
सन्त जनों की सेवा करके, दान मान सम्मान ।
'दीक्षित' क्षुद्र जीव भी करते, निज आतम कल्याण ॥ ३ ॥

राग कोशिया–तीन ताल

निंदक बाबा वीर हमारा, बिन ही कोड़ी बहै बिचारा ॥ धु० ॥
कोटि कर्म के कलमष काटै, काज सँवारे बिनही साटै ॥ १ ॥
आप डूबै और को तारे, ऐसा प्रीतम पार उतारे ॥ २ ॥
जुग जुग जीवौ निंदक मारा, रामदेव ? तुम केरानिहोरा ॥ ३ ॥
निंदक मेरा पर उपकारी, 'दादू' निंदा करे हमारी ॥ ४ ॥

राग गजल–पहाड़ी धुन

समझ देख मन मीत पियारे आसिक होकर सोना क्यारे ।
रूखा सूखा गम का टुकड़ा फीका और सलोना क्यारे ॥
पाया हो तो दे ले प्यारे पाय पाय फिर खोना क्यारे ।
जिन आंखिन में नींद घनेरी तकिया और बिछौना क्यारे ॥
कहै 'कबीर' सुनो भाई साधो सीस दिया तब रोना क्यारे ॥

राग भैरवी, पंजाबी ठेका—तीन ताल

सुनेरी मैंने निर्बल के बल राम ।
पिछली साख भरूं संतन की आडे सँवारे काम ॥
जब लग गज बल अपनो बरत्यो नेक सरो नहिं काम ।
निर्बल के बल राम पुकार्‌यो आये आधे नाम ॥
द्रुपद सुता निर्बल भई तादिन गह लाये निज धाम ।
दु:शासन की भुजा थकित भई वसन रूप भये श्याम ॥
अप बल तप बल और बाहुबल चौथा है बल राम ।
'सूर' किशोर कृपा से सब बल हारे को हरिनाम ॥

राग दस—दादरा

तू दयालु, दीन हौं तू दानि, हौं, भिखारी ।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप पुञ्जहारी ॥ १ ॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो ।
मो समान आरत नहिं, आरत हर तोसो ॥ २ ॥
ब्रह्म तू हौं जीव, तू ठाकुर हौं चेरो ।
तात, मात, गुरु, सखा तू, सब विधि हितू मेरो ॥ ३ ॥
तोहिं मोहि नाते अनेक मानिये जो भावै ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु चरन सरन पावे ॥ ४ ॥

मेरी भावना

जिसने राग द्वेष कामादिक जीते, सब जग जान लिया ।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्पृह हो उपदेश दिया ॥
बुद्ध बीर जिन हरिहर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो ।
भक्त भाव से प्रेरित हो, यह चित्त उसी में लीन रहो ॥

विषयों की आशा नहीं जिनके, साम्य भाव धन रखते हैं ।
निज पर के हित साधन में जो, निशिदिन तत्पर रहते हैं ॥
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या बिना खेद जो करते हैं ।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते हैं ॥
रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे ।
उन्हीं जैसी चर्या में यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ॥
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहीं कहा करूँ ।
परधन बनिता पर न लुभाऊँ, संतोषा मृत पिया करूँ ॥
अहंकार का भाव न रक्खूं, नहीं किसी पर क्रोध करूँ ।
देख दूसरों की बढ़ती को कभी न ईर्ष्या भाव धरूँ ॥
रहे भावना ऐसी, सरल सत्य व्यवहार करूँ ।
बने जहाँ तक इस जीवन में औरों का उपकार करूँ ॥
मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे ।
दीन दुःखी जीवों पर मेरे उर से करुणा श्रोत बहे ॥
दुर्जन-क्रूर-कुमार्ग-रतो पर क्षोभ न मेरे को आवे ।
साम्य भाव रखूं मैं उन पर ऐसी परिणति हो जावे ॥
गुणी जनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे ।
बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे ॥
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखों वर्षों तक जीवूँ या मृत्यु आज ही आ जावे ॥
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे ।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावे ॥

होकर सुख में मग्न न फूलें दुःख में कभी न घबरावें।
पर्वत नहीं स्मशान भयानक अटवी से नहीं भय खावे॥
रहे अडोल अकम्प निरंतर, यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में सहन शीलता दिख लावे॥
सुखी रहें सब जीव जगत के कोई कभी न घबराये॥
वैर पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे।
घर घर चर्चा रहे धर्म की दुष्कृत दुष्कर हो जावे॥
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना मनुज जन्म फल सब पावें।
ईति भीति व्यापे नहीं जग में वृष्टि समय पर हुआ करे॥
धर्म निष्ट होकर राज भी न्याय प्रजा का किया करे।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे॥
परम अहिंसा धर्म जगत में फैल सर्व हित किया करे।
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय, कटुक, कठोर शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करे॥
बनकर सब "युग-बीर" हृदय से देशोन्नति रत रहा करे।
वस्तू स्वरूप विचार खुशी से सब दुःख संकट सहा करे॥

राग बिहाग-तीन ताल

नाम जपन क्यों छोड़ दिया ?

क्रोध न छोड़ा, झूठ न छोड़ा, सत्य वचन क्यों छोड़ दिया॥ध्रु०॥
झूठे जाल में दिल ललचा कर, असल वतन क्यों छोड़ दिया ?
कोड़ी को तो खूब सम्हाला लाल रतन क्यों छोड़ दिया ? ॥ १ ॥
जहि सुमिरन ते अति सुख पावे, सो सुमिरन क्यों छोड़ दिया ?
'खालस' इक भगवान् भरोसे, तन, मन, धन, क्यों न छोड़ दिया॥२॥

राग मल्हार-तीन ताल

साधो मन का मान त्यागो ।
काम क्रोध संगत दुर्जन की, ताते अहनिस भागो ॥ध्रु०॥
सुख दुःख दोनों समकरि जाने, और मान अपमाना ।
हर्ष शोक ते रहै अतीता, तिन जग तत्व पिछाना ॥ १ ॥
अस्तुति निंदा दोऊ त्यागी, खोजै पद निरवाना ।
जन नानक यह खेल कठिन है, कोऊ गुरुमुख जाना ॥ २ ॥

राग खमाज धुमाली

भजेरे भइया राम जिनंद हरी ॥ध्रुव०॥
जप तप साधन कछु नहिं लागत, खरचत नहिं गठरी ॥ १ ॥
संतत संपत सुख के कारण, जासे भूल परी ॥ २ ॥
कहत कबीरा जा मुख राम नहिं, वो मुख धूल भरी ॥ ३ ॥

राग पीलू-दीपचन्दी

इस तन धन की कौन वड़ाई देखते नैनों में मिट्टी मिलाई ॥ध्रु०॥
अपने खातीर महल बनाया, आपहि जाकर जंगल सोया ॥ १ ॥
हाड़ जले जैसे लकड़ी की मोली, बाल जले जैसे घास की पोली ॥ २ ॥
कहत कबीरा सुन मेरे गुनिया, आप मुवे पिछे डुब गई दुनिया ॥ ३ ॥

राग धनाश्री—तीन ताल

अब हम अमर भये, न मरेंगे,
या कारण मिथ्या तजियो तज क्योंकर देह धरेंगे? अब॥१॥
राग दोष जग बन्ध करत है, इनको नाश करेंगे,
मर्यो अनंत काल ते प्राणी, सो हम काल हरेंगे ॥अब०॥२॥

देह विनाशी हूँ अविनाशी, अपनी गति पकरेंगे ।
नासी नासी हम थिरवासी, चोखे व्है निसरेंगे ॥अब०॥३॥
मर्‍यो अनंत बार बिन समज्यो, अब सुख दुःख विसरेंगे ।
आनन्दघन निपट निकट अक्षर दो, नहीं सुमरे सो सुमरेंगे॥४॥

राग केदार—तीन ताल

राम कहो रहमान कहो कोउ, कान कहो महादेवरी ।
पारसनाथ कहो कोउ ब्रह्मा, सकल ब्रह्म स्वयमेवरी ॥राम०॥१॥

भाजन भेद कहावत नाना, एक मृत्तिका रूपरी ।
तैसे खण्ड कल्पना रोपित, आप अखंड सरूपरी ॥ राम० ॥२॥

निज पद रमे राम सो कहिये, रहिम करे रहिमानरी ।
कर्षे करम कान सो कहिये, महादेव निर्वाणरी ॥ राम० ॥३॥

परसे रूप पारस सो कहिये, ब्रह्म चिन्है सौ ब्रह्मरी ।
इह विधि साधो आप आनन्द घन चेतनमय निकर्मरी ॥राम०॥४॥

राग तिलक कामोद—तीन ताल

पायो जी मैंने राम-रतन धन पायो ॥ टेक ॥

वस्तु अमोलक दी मेरे सतगुरु, किरपा कर अपनायो ॥ १ ॥

जनम जनम की पूँजी पाई, जग में सभी खोवायो ॥ २ ॥

खरचै न खूटै, वाको चोर न लूटे, दिन दिन बढ़त सवायो ॥ ३ ॥

सत की नाव, खेवटिया सतगुरु, भवसागर तर आयो ॥ ४ ॥

"मीरा" के प्रभु, गिरधर नागर, हरख हरख जस गायो ॥ ५ ॥

राग खमाज—धुमाली

वैष्णव (श्रावक) जन तो तेने कहिये जे पीड़ पराई जाणे रे,
परदुःखे उपकार करे तो ये, मन अभिमान न आणे रे ॥ध्रु०॥
सकल लोकमा सहुने वंदे, निन्दा न करे केनी रे,
वाच काछ मन निश्चल राखे, धन धन जजनी ते नीरे ॥ १ ॥
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, परस्त्री जेने मातरे,
जिव्हा।थकी असत्य न बोले, परधन नव झाले हाथ रे ॥ २ ॥
मोह माया व्यापे नहिं जेने, दृढ़ वैराग्य जैना मनमाँ रे,
राम नाम शुँ ताली लागी, सकल तीरथ तेना तन माँ रे ॥ ३ ॥
वण लोभी ने कपट रहित छे, काम क्रोध निवार्या रे,
भणे 'नरसैंयो' तेनुँ दरसण करता, कुल एकौ तेरे तार्यारे ॥ ४ ॥

राग छाया खमाज तीन ताल

सद्गुरु शरण विना अज्ञान तिमिर टल से नहिं रे ।
जन्म मरण देनारु बीज खरुं बल से नहिं रे ॥ध्रु०॥
प्रेमामृत वच पान बिना, सांचा खांटा ना भान बिना ।
गांठ हृदयनी, ज्ञान बिना गल से नहि रे ॥ १ ॥
शास्त्र ज्ञान सदा संभारे, तन मन इंद्रिय तत्पर वारे ।
वगर विचारे रे वलमां सुख रल से नहि रे ॥ २ ॥
तत्व नथी तारा मरामां, सुज्ञ समज नरता सारासां ।
सेवक सुत दारामां, दिन वल से नहि रे ॥ ३ ॥
"केशव" प्रभुनी करतां सेवा परमानंद बतावे तेवा ।
शोध बिना सज्जन एवा मलशे नहि रे ॥ ४ ॥

अभिलाषा

नहीं चाहिये मुझे राज्य पद, अथवा भौतिक विभव विलास ।
कष्टोपार्जित प्रजाग्रास, हरने से उत्तम है उपवास ॥
होकर धन मद मत्त करूंगा, मैं लोगों पर अत्याचार ।
सुन न सकूंगा प्रजावृन्द की, हृदय विदारक हाहाकार ॥
राज मार्ग से दूर किसी, एकन्त शान्त खेरे के पास ।
पावन पर्ण कुटि में चाहता, मैं अपना स्वच्छन्द निवास ॥
काव्य और अध्यात्म विषय के, चुने ग्रन्थ दो चार अनूप ।
हों यदि मेरे निकट बनूं तो, मैं तो फिर भूपों का भूप ॥
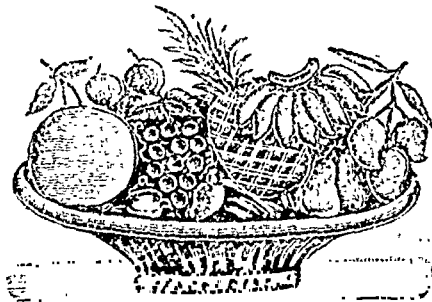
॥ ॐ अर्हत ॥

शान्ति-प्रकाश

प्रथम अध्याय

प्रभु प्रार्थना

॥ मंगलाचरण ॥

प्रेम सहित वन्दों प्रथम, जिन पद कमल अनूप ।
ताके सुमरत अधम नर, होवे शान्ति स्वरूप ॥१॥

मैं प्रेम पूर्वक पहले जिनेश्वर भगवान् के चरणार्विन्दों को नमस्कार करता हूँ कि जिनकी उपमा और किसी से नहीं दी जाती। उन प्रभु के स्मरण करने से अधम (नीच) पुरुष भी शान्तिस्वरूप हो जाता है ॥१॥

तुम शरणे आयो प्रभू, राख लेउ निज टेक ।
निर्विकल्प मम सिद्धजी, देवो विमल विवेक ॥२॥

हे सिद्ध भगवान्! मैं आपके शरण में आया हूँ सो मुझे शुद्ध निर्मल विवेक प्राप्त हो और जैसा हूँ वैसा आप अपनी ज्ञान दृष्टि से देखें ॥२॥

करूँ वंदना भाव युत, त्रिविध योग थिर धार ।
परम पूज्य आचार्य मम, देहु ज्ञान निरधार ॥३॥

हे आचार्यजी महाराज! मैं आपको भाव सहित वन्दना करता हूँ अतः मुझे निश्चय ही निर्मल ज्ञान दीजिये ॥३॥

उपाध्याय अध्ययन श्रुति, निशिदिन करत अभ्यास ।
दीनबन्धु मुझ दीजिये, शम दम ज्ञान विलास ॥४॥

हे उपाध्यायजी महाराज! आप नित्य प्रति दिन-रात ज्ञान का अभ्यास करते हैं, अतः मुझ में कृपाकर शम, दम, ज्ञान का उदय करें ॥४॥

सो साधु बाधा हरो, कर्म शत्रु रणजीत ।
निपूण जोहरी ज्यों लखे, आतम रतन पुनीत ॥५॥

वे साधु लोग हमारे दुःखों को हरण करें जिन्होंने कर्मरूपी शत्रु को जीत लिया है। जिस प्रकार चतुर रत्नों की परीक्षा करनेवाला जौहरी असली जवाहिर को पहिचान लेता है उसी प्रकार इन साधु महात्माओं ने आत्म-तत्व का रस पहिचान लिया है ॥५॥

अधिक प्रिय नव रसन में, है रस शांति विशेष ।
स्थायी भाव निर्वेद से, मेटो सकल कलेश ॥६॥

नव रसों में शान्ति-रस अधिक प्रिय है; इसलिये शान्ति-भाव में स्थिर रह सब क्लेशों का नाश करो ॥६॥

विकल मति अभिलाष अति, कपटक्रिया गुण चोर ।
मैं चाहत कछु शान्ति रस, तुमसे करी निहोर ॥७॥

मेरी बुद्धि चंचल है, इच्छा बहुत बड़ी है, और मैं कपट के काम करनेवाला एवं गुण का चोर अर्थात् किये हुवे उपकारों

को भूल जाने वाला हूँ; इसलिये आपसे विनय पूर्वक कुछ शान्ति-रस प्राप्त करना चाहता हूँ ॥७॥

कापै जाचूँ जाय कर, तुम सम नहीं दातार ।
करुणानिधि करुणा करी, दीजे शान्ति विचार ॥८॥

इस दुनिया में आपके समान कोई उदार नहीं कि जिससे मैं माँग सकूँ; इसलिये हे दयासागर ! मुझे कृपया शान्ति के विचार प्रदान करो ॥८॥

मैं गुलाम हौं रावरो, मैरो बिगरत काज ।
ताहि सुधारे बनी रहै, मैरी तेरी लाज ॥९॥

मैं आपका दास हूँ और मेरा नुकसान हो रहा है; इसलिये आप इसे ठीक कर दीजिये कि जिससे मेरी और आपकी लज्जा बनी रहे ॥९॥

शांति छवि निरखत रहौं, जाचूँ नहिं कछु और ।
अरजी हुकम चढ़ाय द्यो, पर्यो रहूँ तुम पौर ॥१०॥

मैं आप जैसी शान्ति-रस के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहता; इसलिये मेरी विनय स्वीकार कर लीजिये कि मैं आपके दरवाजे पर पड़ा रहूँ ॥१०॥

जो गुण होने चाहिये, मुझमें नहिं लवलेश ।
तुम चरणन आश्रित रहूँ, सो बुध देहु जिनेश ॥११॥

मुझ में जो गुण होने चाहिए थे उनका जरा भी अंश नहीं है। इस कारण मुझे ऐसी बुद्धि दो कि मैं आपके गुणों का अवलम्बन कर पड़ा रहूँ ॥११॥

तड़पत दुखिया मैं अति, पलक पड़त नहिं चैन ।
अब सद्दृष्टि कर निरखिये, दीले रहे अनेन ॥१२॥

करूँ वंदना भाव युत, त्रिविध योग थिर धार।
परम पूज्य आचार्य मम, देहु ज्ञान निरधार ॥३॥

हे आचार्यजी महाराज! मैं आपको भाव सहित वन्दना करता हूँ अतः मुझे निश्चय ही निर्मल ज्ञान दीजिये ॥३॥

उपाध्याय अध्ययन श्रुति, निशिदिन करत अभ्यास।
दीनबन्धु मुझ दीजिये, शम दम ज्ञान विलास ॥४॥

हे उपाध्यायजी महाराज! आप नित्य प्रति दिन-रात ज्ञान का अभ्यास करते हैं, अतः मुझ में कृपाकर शम, दम, ज्ञान का उदय करें ॥४॥

सो साधु बाधा हरो, कर्म शत्रु रणजीत।
निपूण जोहरी ज्यों लखे, आतम रतन पुनीत ॥५॥

वे साधु लोग हमारे दुःखों को हरण करें जिन्होंने कर्मरूपी शत्रु को जीत लिया है। जिस प्रकार चतुर रत्नों की परीक्षा करनेवाला जौहरी असली जवाहिर को पहिचान लेता है उसी प्रकार इन साधु महात्माओं ने आत्म-तत्व का रस पहिचान लिया है ॥५॥

अधिक प्रिय नव रसन में, है रस शांति विशेष।
स्थायी भाव निर्वेद से, मेटो सकल कलेश ॥६॥

नव रसों में शान्ति-रस अधिक प्रिय है; इसलिये शान्ति-भाव में स्थिर रह सब क्लेशों का नाश करो ॥६॥

विकल मति अभिलाष अति, कपटक्रिया गुण चोर।
मैं चाहत कछु शान्ति रस, तुमसे करी निहोर ॥७॥

मेरी बुद्धि चंचल है, इच्छा बहुत बड़ी है, और मैं कपट के काम करनेवाला एवं गुण का चोर अर्थात् किये हुवे उपकारों

को भूल जाने वाला हूँ; इसलिये आपसे विनय पूर्वक कुछ शान्ति-रस प्राप्त करना चाहता हूँ ॥७॥

कापै जाचूँ जाय कर, तुम सम नहीं दातार ।
करुणानिधि करुणा करी, दीजे शान्ति विचार ॥८॥

इस दुनिया में आपके समान कोई उदार नहीं कि जिससे मैं माँग सकूँ; इसलिये हे दयासागर! मुझे कृपया शान्ति के विचार प्रदान करो ॥८॥

मैं गुलाम हौं रावरो, मैरो बिगरत काज ।
ताहि सुधारे बनी रहै, मैरी तेरी लाज ॥९॥

मैं आपका दास हूँ और मेरा नुकसान हो रहा है; इसलिये आप इसे ठीक कर दीजिये कि जिससे मेरी और आपकी लज्जा बनी रहे ॥९॥

शांति छवि निरखत रहौं, जाचूँ नहिं कछु और ।
अरजी हुकम चढ़ाय द्यो, पर्यो रहूँ तुम पौर ॥१०॥

मैं आप जैसी शान्ति-रस के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहता; इसलिये मेरी विनय स्वीकार कर लीजिये कि मैं आपके दरवाजे पर पड़ा रहूँ ॥१०॥

जो गुण होने चाहिये, मुझमें नहिं लवलेश ।
तुम चरणन आश्रित रहूँ, सो बुध देहु जिनेश ॥११॥

मुझ में जो गुण होने चाहिए थे उनका जरा भी अंश नहीं है। इस कारण मुझे ऐसी बुद्धि दो कि मैं आपके गुणों का अवलम्बन कर पड़ा रहूँ ॥११॥

तड़पत दुखिया मैं अति, पलक पड़त नहिं चैन ।
अब सुदृष्टि कर निरखिये, ढीले रहे न नैन ॥१२॥

मैं बड़ा दुःख पा रहा हूँ और मुझे एक क्षण भर भी चैन नहीं पड़ती; इसलिये अब देर न लगा, कृपा दृष्टि से शीघ्र देखिये ॥१२॥

यह सम्बन्ध भलो बन्यो, हम तुम सों सर्वज्ञ ।
त्यागे ताहि न संग रखे, पिता पुत्र लखि अज्ञ ॥ १३॥

आपका और मेरा सम्बन्ध अच्छा बना है; क्योंकि आप तो सर्वज्ञ हैं और मैं मूर्ख हूँ । इसलिये जिस प्रकार पिता, मूर्ख पुत्र को भी पालता है उसी तरह आप कृपया मुझे अलग न करें ॥१३॥

मेटहु कठिन कलेश तुम, परमातम परमेश ।
दीन जान कर बक्षिये, दिन-दिन ज्ञान विशेष ॥१४॥

हे परमात्मा ! आप भगवान हैं, अतः मुझे गरीब समझ मेरे कठिन कर्मों के दुख को दूर कीजिये । और प्रतिदिन मेरा ज्ञान बढ़ता रहे ॥१४॥

कृपा करो निर्बुद्धि पै, लखूँ ज्यूँ अनुभव रीति ।
अशुभ और शुभ देखिकै, करूँ न कबहूँ प्रीति ॥१५॥

आप मुझ दुर्बुद्धि पर कृपा कीजिये कि जिससे मैं अनुभव की रीति पहिचान शुभ और अशुभ कार्यों को देख कर उनसे कभी भी प्रेम न करूँ ॥१५॥

सब प्रकार धनवन्त हो, सुनहू गरीब निवाज ।
आरत रुद्र कुध्यान तें, बच्च-बच्च महाराज ॥१६॥

हे दीन बन्धो ! आप सब ऐश्वर्य सम्पन्न हैं, इसलिये आर्त्त और रौद्र रूपी कुध्यान (बुरे विचारों) से मुझे सर्वथा दूर कीजिये ॥१६॥

धर्म शुक्ल ध्यावत रहूँ, दोय ध्यान सुख कार ।
या जग ममता उदधि ते, देवे पार उतार ॥१७॥

हे प्रभो ! मैं धर्म और शुक्ल ध्यान को सदा ध्याता रहूँ; क्योंकि ये ही सुखदायी हैं। यही दो ध्यान संसार समुद्र से पार उतारने के लिये समर्थ हैं ॥१७॥

करुणा करिके मेटिये, विषय वासना रोग ।
मैं कुपथी वेदन प्रबल, लखि मत जोग अजोग॥१८॥

आपकी वाणी से विषय वासना रूपी रोग मिटता है, मैं कुपथगामी, अतः अधिक दुःखी होता हूँ, मुझे योग्यायोग्य का ध्यान भी नहीं है ॥१८॥

मैं गरजी अरजी करूँ, सुनि हो जग प्रतिपाल ।
चाह सतावे दास को, यह दुख दीजे टाल ॥१९॥

हे जग प्रतिपाल ! मैं इस मतलब से प्रार्थना कर रहा हूँ कि आपके इस दासको इच्छा सताती है उसे दूर कर दीजिये ॥१९॥

प्रभु तव सम्मुख हो रहों, देऊँ जगत को पूठ ।
कृपा-दृष्टि अस करहु तुम, ज्यों भव जावे छूट ॥२०॥

हे प्रभो ! मेरी यही इच्छा है कि मैं आपके सामने बना रहूँ, और दुनिया से विमुख उदास रहूँ। आप मुझ पर ऐसी दया कीजिये जिससे मैं संसार-समुद्र से पार उतर जाऊँ ॥२०॥

मैंने जो कुकर्म किये, दीखत हैं सब तोय ।
सरन लेऊ जिनराज की, फेर न दुख दे मोय ॥२१॥

हे सर्वज्ञ देव ! मैंने जो पाप किये हैं उनको आप जानते हैं अब मैं आपकी शरण में हूँ, इसलिये कर्म-दुःख टल जायगा ॥२१॥

विपत्ति रही मोय घेर के, सुनी न अजहुँ पुकार।
मेरी बिरयां नाथ तुम, कहाँ लगाई बार ॥२२॥

हे नाथ! मुझे विपत्ति ने घेर रखा है, और आपने मेरी अब तक पुकार नहीं सुनी, आपने मेरी बार इतनी देर क्यों की? ॥२२॥

ऐसी बिरियाँ में किधों, टर गये दीनदयाल।
बिना कह्याँ कैसे रहूँ, अब तो कर प्रतिपाल ॥२३॥

हे दयालु! आप इस समय अपने यश को कैसे भूल गये। मैं बिना कहे कैसे रह सकता हूँ, इसलिये अब तो आप मेरी प्रार्थना सुन लीजिये ॥२३॥

जो कहलाऊँ और पै, मिटै न मम उरझार।
मेरी तुमरे सामने, मिटसी तनकी रार ॥२४॥

यदि मैं किसी दूसरे के मारफत अपनी पुकार पहुँचाऊँ तो शान्ति नहीं होती है। अतः मैं आपके सामने ही अपनी प्रार्थना करूँ तो कष्ट दूर हो सकता है ॥२४॥

दुष्ट अनेक उद्धार के, थकि रहे किधौं दयाल।
धीरे-धीरे त्यारिये, मेरो भी लखि हाल ॥२५॥

हे प्रभो! यदि आप अनेक दुष्टों का उद्धार करके थक गये हैं तो मेरी ओर दृष्टिपात कर धीरे-धीरे मेरा भी उद्धार कीजिये ॥२५॥

द्वितीय अध्याय

राग निवारण

अरे जीव भव वन विषैं, तेरा कवन सहाय।
जाके कारण पचि रह्यो, ते सब तेरे नांय ॥२६॥

हे जीव ! इस संसार रूप वन में तेरा सहायक कौन है। नके लिये तू इतना दुःख उठा रहा है ये (कुटुम्बी आदि) कोई नहीं हैं ॥२६॥

संसारी को देख ले, सुखी न एक लगार।
अब तो पीछा छोड़ तू, मत धर सिर पर भार॥२७॥

संसारी मनुष्यों को तू अपनी आँखों से देख, इनमें कोई ञ्चित् मात्र भी आराम में नहीं है; इसलिये तू अब दुनिया पीछा छोड़ दे और अपने ऊपर बज़न मत चढ़ा ॥२७॥

झूँठे जग के कारने, तू मत कर्म बँधाय।
तू तो रीता ही रहे, धन पेला ही खाय ॥२८॥

इस मिथ्या जगत् के लिये तू कर्मों को मत बाँध, क्योंकि तो केवल परिश्रम करनेवाला होगा और उस द्रव्य को दूसरे लोग खा जायेंगे ॥२८॥

तन धन संपत पाय के, मगन न हो मन माँय।
कैसे सुखिया होयगा, सोवत लाय लगाय॥२९॥

तू अपने शरीर, धन और सुख को देख, मन में मत फूल

जा, क्योंकि तू आग लगा कर सो रहा है तो फिर कैसे सुखी रह सकता है ॥२६॥

ठाठ देख भूले मतो, यह पुद्गल परिजाय।
देखत-देखत थांहरे, जासी थिर न रहाय ॥३०॥

तू संसार की विभूति को देख दिल में गर्व न कर। ये तेरे देखते ही देखते मिट जायेंगे, ठहरने के नहीं ॥३०॥

लूटेंगे ज्ञानादि धन, ठग सम यह संसार।
मीठे वचन सुनाय के, मोह फाँसि गल डार ॥३१॥

ये संसारी लोग ठग की तरह मोह रूपी फाँसी को तेरे गले में डाल कर और चिकनी चुपड़ी बातें कर तेरा ज्ञानादि धन को लूट लेवेंगे ॥३०॥

किधौं भूत तोकों लग्यो, करे न तनक विचार।
ना माने तो परख ले, मतलब को संसार ॥३२॥

क्या तुझ को प्रेत लग गया है कि जिससे तू कुछ भी विचार नहीं करता यदि तुझे विश्वास न हो तो परीक्षा करके देख, कि यह संसार मतलब का है ॥३२॥

काया ऊपर थांहरे, सब से अधकी प्रीत।
या तो पहिले सबन में, देगी दगो नचीत ॥३३॥

जिस शरीर के ऊपर तू सब से ज्यादा प्रेम करता है यही सब से पहले तुझे दगा देगा, यह बात निश्चित है ॥३३॥

विषय सुखन को सुख गिने, कहो कहाँ तक भूल।
आँख छताँ अन्धा हुआ, जानपणा में धूल ॥३४॥

तू इन्द्रियों के सुख को ही आराम मान बैठा है यह तेरी

कितनी बड़ी गलती है। तेरे आँख होने पर भी नहीं सूझता; इसलिये तेरे ज्ञानपने को धिक्कार है ॥३४॥

नित प्रति दीखत ही रहे, उदय अस्त गति भान।
अजहू न भयो ज्ञान कछु, तू तो बड़ो अयान ॥३५॥

तू सूर्य को ऊगना और अस्त होना हमेशा देखता रहता है फिर भी तुझे अब तक कुछ भी ज्ञान नहीं हुआ अतः तू महा मूर्ख है ॥३५॥

किसके कहे नचीत तू, सिर पै फिरे जु काल।
बाँधे है तो बाँध ले, पानी पहिले पाल ॥३६॥

तू किसके सिखाये ऐसा बेपरवाह हो रहा है, अरे! तेरे शिर पर काल मँडरा रहा है। अगर तुझे पाल बाँधना है तो वर्षा-ऋतु के पहले पाल बाँध ले ॥३६॥

आया सो सब ही गया, अवतारादि विशेष।
तू भी यों ही जायगा, यामें मीन न मेष ॥३७॥

जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु अवश्य हुई। बड़े-बड़े तीर्थङ्करादि का भी यही हुआ; इसलिये एक दिन तेरा भी अन्त होगा। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ॥३७॥

यह अवसर फिर ना मिले, अपना मतलब सार।
चुकते दाम चुकाय दे, अब मत राख उधार ॥३८॥

ऐसा मौका फिर तुझे हाथ न लगेगा; इसलिये अपना स्वार्थ (इसी समय) सिद्ध करले। अब कुछ भी कर्ज़ा बाकी मत रख। जितनी भी कर्ज़दारी हों, चुका दे ॥३८॥

कैसे गाफिल हो रहा, नेडा आत करार।
निपजी खेती देय क्यों, बाटी सटे गँवार ॥३९॥

तू बेपरवाही से कैसे पड़ा है ? मौत के वायदे तिथि तो प्रतिदिन निकट आ रही है। हाथ आई हुई फ़सल को एक बाटी के टुकड़े के लिये क्यों दे रहा है ॥३९॥

धर्म विहार किये नहीं, कीनो विषय विहार।
गाँठ खाय रीते गये, आके जग हटवार ॥४०॥

इस संसार रूपी बाज़ार में आकर तू ने कुछ भी नहीं कमाया। पैसे खर्च वापिस चल दिया ? क्योंकि तूने धर्म कर्म नहीं किया, केवल इन्द्रियों के सुखों में मग्न रहा ॥४०॥

काज करत पर घरन के, अपनो काज बिगार।
सीत निवारे जगत की, अपनी झौंपरी बार ॥४१॥

तू औरों के घरों का काम कर रहा है; लेकिन तेरा (खुदका) काम खराब हो रहा है उसकी तुझे बिलकुल खबर नहीं ? तेरा काम उस मूर्ख के समान है जो अपनी झौंपड़ी को जला कर दूसरों की ठंड मिटाता है ॥४१॥

नहिं विचार तैने किया, करता था क्या काज।
उदय होयगा कर्मफल, तब उपजेगी लाज ॥४२॥

हे मित्र ! तूने इसका भी विचार नहीं किया कि मेरा कर्त्तव्य क्या है ? जब तुझे इन कर्मों का फल मिलेगा उस समय तुझे लज्जित होना पड़ेगा ॥४२॥

झूठी संसारीन की, छुटैगी जब लाज।
तब सुखिया तू होयगा, इनते अलगा भाज ॥४३॥

जब इन झूंठे संसारी लोगों की शरम तुझे न रहेगी तब तू इन दुःखों से छूट कर सुखी हो सकेगा। अतः इनको त्याग दे ॥४३॥

अपनी पूँजी से करो, निश्चल कार विहार।
बाँध्या सो ही भोग ले. मतकर और उधार ॥४४॥

तू अपनी पूँजी पर से बराबर व्यापार करता रह. तूने अब तक जितनी कर्ज़दारी की, उसे ही समेट ले और अब कर्ज़दारी न कर ॥४४॥

नया कर्म ऋण काढ के, करसी कार विहार।
देणा पड़सी पारका. किम होसी छुटकार ॥४५॥

यदि तू नये सिर कर्म रूपी साहूकार से कर्ज़ लेकर व्यापार करेगा, तो तुझे आखिर दूसरे का कर्ज चुकाये बिना कभी छुटकारा नहीं होगा ॥४५।

विषय भोग किम्पाक सम, लखि दुख फल परिणाम।
जब विरक्त तू होयगा, तब सुधरेगा काम ॥४६॥

विषय, इन्द्रियों का भोग कड़ुवे फल के समान हैं; इसलिये इनका नतीज़ा दुःख देने वाला जान कर इन्हें तू त्याग देगा तो तेरा काम सुधर जायगा ॥४६॥

ऐरे मेरे मन पथिक, तू न जाव वहँ ठौर।
बटमारा पाँचों जहाँ, करे साह कूँ चोर ॥४७॥

ऐ मेरे मन रूपी पथिक (मुसाफिर)! तू उस स्थान पर कदापि मत जा, जहाँ पाँचों इन्द्रिय रूपी ठग, साहूकार को चोर ठहरा देते हैं ॥४७॥

आरम्भ विषय कषाय की, कीनो बहुतिक वार।
कारज कछु सरिया नहीं, उलटा हुवा ख़्वार ॥४८॥

तूने संसारिक भोगों को बहुत बार सेवन किया किन्तु

उनसे तेरा कार्य सिद्ध नहीं हुआ। वे तेरे लिये दुःखदायी सिद्ध हुए ॥४८॥

चारों संज्ञा में सदा, सुते निपुण चित्त लाग।
गुरु समझावें कठिनसे, उपजे तउ न विराग ॥४६॥

हे चतुर! तुझ सोये हुए को (आहार, भय, मैथुन, परिग्रह) चारों संज्ञाओं से बड़े परिश्रम के साथ गुरु समझाने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन तुझे इस पर भी वैराग्य उत्पन्न नहीं होता, कितना आश्चर्य है ॥४६॥

खैर हुआ जो कुछ हुआ, अब करणो नहिं जोग।
बिना विचारे तें किया, ताका ही फल भोग ॥५०॥

अस्तु, अब तक जैसा तेरे हाथ से हुआ सो हुआ, अब ऐसा कार्य करना योग्य नहीं है। जो कार्य तूने बिना विचार किये हैं, उनही के फल को भोग ले ॥५०।

तृतीय अध्याय

द्वेष निवारण

—:०:—

बुरो कहे कोउ तो भनी, तो तू भला मनाह।
बूरा मीठा होत है, सब बनि हैं पकवान ॥५१॥

यदि तुझे कोई बुरा कहे तो उसे तू बुरा मत मान लेकिन उसे तू अच्छा ही समझ। कारण कि बूरा मीठा होता है। और जितने पक्वान्न बनते हैं, वे बूरे ही से बनते हैं ॥५१॥

कटु तीक्ष्ण अति विष भरी, गाली शस्त्र समान ।
अशुभ कर्म गुम्मड मिट्यो, यों जिय सुलटी मान ॥५२॥

यदि कोई तुझे कड़वा बोले तो उसे तू बुरा न मान। लेकिन उसे तू अच्छा ही समझ क्योंकि पापों का क्षय इसी प्रकार होता है ऐसा तू सुलटा मान ले ॥५२॥

कटुक वचन कोऊ कह दिया, लगे जु दिलमें तीर।
समदृष्टि यों समझले, मो जान्यो अतिवीर ॥५३॥

अगर किसी ने कडुवे वचन कह दिये और वे तेरे दिल में बाण की तरह चुभ गये तो तू अपने मन में यूँ मान कि उसने तुझे बड़ा सहनशील, पराक्रमी समझा है ॥५३॥

वैरी होता तो कबहुँ, नहिं कहता कटु बात ।
सज्जन दीखत माहरा, रुज लखि कटुक खवात ॥५४॥

यदि कडुवा बोलनेवाला तेरा शत्रु होता तो कभी ऐसी कडुवी बात न कहता यह तो भीतर से सज्जन सरीखा दीख रहा है, क्योंकि कडुवी औषधि वही वैद्य देता है जो तेरे रोगको मिटाना चाहता है ॥५४॥

अवगुण सुणकर आपणा, रे मन ! सुलटी धार ।
मो गरीब को जानिके, लीनो बोझ उतार ॥५५॥

तू अपनी निन्दा को सुन कर प्रसन्न चित्त बन जा; क्योंकि उसने तुझे गरीब जान कर पापों का बोझ ढो कर तुझे हलका कर दिया है ॥५५॥

मैं भूल्यो शुभ राह को, इनने दई बताय ।
दुर्जन जान परै नहीं, सज्जन सो दरसाय ॥५६॥

मैं अपने अच्छे रास्ते को भूल गया था सो इसने बतला दिया, इसलिये यह तो दुर्जन नहीं जान पड़ता, यह तो सज्जन ही दीख रहा है ॥५६॥

ज्ञान अस्त सूरज हुआ, मैं भूल्यो निज हाल।
निन्दा रूप मसाल ले, इने दिखाई राह ॥५७॥

ज्ञान रूपी सूर्य के अस्त हो जाने से मैं अपने मार्ग को भूल गया था सो इसने निन्दा रूपी मसाल हाथ में ले, रास्ता बता दिया ॥५७॥

सुनि निन्दक के वचन कूँ, चित मति करे उचाट।
यह दुर्गंधी पवन अति, बहती को मत डाट ॥५८॥

निन्दा करनेवाले के वचनों को सुन कर तू अपने मनमें उद्वेग मत कर क्योंकि यह बहुत बुरी हवा बह रही है उसे तू मत रोक ॥५८॥

कुवचन सर क्या कर सके, तू हो जा पाषाण।
तेरा कछु बिगरे नहीं, वाका ही अपमान ॥५९॥

तू पत्थर के समान दृढ़ हो जा फिर तेरा कटु वचन रूपी तीर क्या कर सकेगा। इसमें तेरी हानि कुछ नहीं इसमें उसी का अपमान है ॥५६॥

कुवचन गोली के लगे, जो ले मन को मार।
आपही ठंडी होयगी, हो जो शीतल गार ॥६०॥

अगर तू कुवचन रूपी गोली के लगने से मन को मार लेगा तो वह तेरा कुछ नहीं कर सकेगी, इसलिये तू ठंडी मिट्टी के समान शान्त चित्त बन जा कि वह गोली आपही ठंडी हो जाय ॥६०॥

तैने ऊपर सों कही, मैंने समझो ठेट।
खटका सब ही मिट गया, एक रह गया पेट॥६१॥

तैने तो वैसे ही प्रस्ताव से कुछ कह दिया लेकिन मैंने उसे अपने चित्त में जमा लिया है जिससे मेरा सब दुःख मिट गया और ज्ञान रूपी रत्न प्राप्त हो गया ॥६१॥

रे चेतन सुलटी समझ, तेरा सुधरा काज।
कुवचन धरवर थांहरी, इणने सौंपी आज ॥६२॥

यदि तुझे कोई कटुवचन कहे तो तू उसे अच्छा मान क्योंकि किसी जन्म में तैने उसकी अपकार रूपी धरोहर रक्खी थी उसका हिसाब आज बेबाक हुआ, ऐसा समझ ॥६२॥

होगी सोही नीसरे, वस्तु भरी जिहिं माँहि।
या का गाहक मत बने, तेरे लायक नाहिं ॥६३॥

जिस बरतन में जैसी चीज़ रक्खी होगी निकालने पर वैसी ही बाहर निकलेगी। इसलिये तू इस (बुरी चीज़) का ग्राहक मत बन, यह तेरे योग्य नहीं ॥६३॥

अपना अवगुण सुण करि, मन माने जिय रीस।
मनमें तू यों समझ ले, मुझको दे आशीश॥६४॥

तू अपनी निन्दा करनेवालों की बात सुन कर नाराज़ न हो लेकिन तू ऐसा विचार कर कि इसने मेरी निन्दा द्वारा चेतावनी कर सुमार्ग पर लगा दिया है ॥६४॥

क्रोध अग्नि दिल मत लगा, सुनि अयथारथ बोल।
क्षमा रूप जल छिड़किये, नेक न लागे मोल ॥६५॥

दूसरे के खोटे वचन सुन कर दिल में क्रोध रूपी आग को मत लगा वरन तू उस पर क्षमा रूपी जल डाल दे कि जिससे

दिल की भी आग बुझ जावे, क्योंकि इसकी कुछ भी कीमत नहीं देनी पड़ती ॥६५॥

दुर्जन चुप होहे नहीं, तू तो छिन चुप साध।
तृण बिन परि है अगनि कहुँ, आपहि होहि समाध॥६६॥

दुष्ट आदमी चुप नहीं होता इसलिये तू ही स्वयं चुप हो जा कि जिससे वह स्वयं शान्त हो जावेगा। क्योंकि यदि आग घास से रहित स्थान में कहीं गिर भी गई तो वह आप ही आप शान्त हो जायगी ॥६६॥

तू तृण सम कटु वचन सुन, क्रोध अगन मत दाझ।
उपल नीर सम करहु मन, तब मिलि हैं शिवराज॥६७॥

तू कड़वे शब्दों को सुन कर उन्हें घास की तरह तुच्छ मान ले और क्रोध रूपी अग्नि से खुद को मत जला किन्तु अपने चित्त को जल में गिरे हुवे पाषाण के समान शीतल करले तब तुझे कल्याण का मार्ग मिलेगा ॥६७।

आई गई कर गालि को, क्रोध चण्डाल समान।
नतर पिछानी चण्डालिनी, पल्लो पकरे आन॥६८॥

हे मित्र! तू क्रोध रूपी चांडाल को अपने पास मत फटकने दे नहीं तो गाली रूपी चांडालिनी तेरा पल्ला पकड़ कर तुझे अपवित्र बना देगी ॥६८॥

प्रभु सहाय नहिं होयेंगे, रे जिय साँची जान।
क्रोध करी जूँ हो गयो, साधू रजक समान॥६९॥

हे आत्मा! तू इस बात को बिलकुल सत्य मान कि क्रोध करने से परमात्मा तेरा सहायक न होगा। क्योंकि क्रोध करने से साधु भी धोबी के समान अपवित्र हो जाता है ॥६९।

आतम वस्त्र मैला लखि, इणने दीना धोय।
कटुक वचन साबुन करि, निर्मल जानिके मोय ॥७०॥

यदि कोई तुझको कड़वा वचन कह कर फटकारे तो तू उसे अपना मित्र समझ; क्योंकि उसने तुझे असमर्थ समझ तेरे आत्मा रूपी मैले वस्त्र को अपने वचन रूपी साबन को लगा स्वच्छ कर दिया है ॥७०॥

जोंहरि बनि के मति करे, कुँजड़ी के संग रार।
रतन निखरसी थांहरा, भाजी सटे गँवार ॥७१॥

हे मूर्ख! तू जौंहरी होकर कुँजड़ों के साथ लड़ाई मत कर; क्योंकि उसकी तो भाजी ही बिखरेगी और तेरे अमूल्य रत्न गुम जायेंगे ॥७१॥

साला की गाली दई, यह विचार चित टार।
भगिनी सम इनकी त्रिया, मोहि समझ्यो व्रतधार॥७२॥

अगर कोई तुझे 'साला' ऐसा कह कर गाली दे तो तू उस पर क्रुद्ध न हो; क्योंकि उसने तुझे ब्रह्मचारी समझा है; अतः तू उसकी स्त्री को बहिन के बराबर मान ॥७२॥

किरतघनी बननो नहीं, दई गारि इण मोहि।
अस आतम शीतल करौं, मम उधार तब होहि॥७३॥

अगर कोई तुझे गाली दे तो तू उसका उपकार मान; क्योंकि उसने तेरे कलेजे को ठंडा करने के लिये अमूल्य औषधि दी है, जिससे तेरी आत्मा का पाप नाश हो ॥७३॥

गाली एकहि होत है, बोलत होत अनेक।
रे जिय तू बोले नहीं, तो वही एक की एक॥७४॥

गाली एक होती है लेकिन यदि तू उसका प्रत्युत्तर देने के लिये अपना मुख खोलेगा तो एक गाली की अनेक गालियाँ उत्पन्न हो जायेंगी। यदि न बोलेगा तो उसकी गाली अकेली ही रहेगी ॥७४॥

अनन्त काल पहिले प्रभु, देख रखे यह भाव।
पडि है कटुवच श्रवणमें, ते किम टाल्यो जाय ॥७५॥

अनन्त काल पहले ही प्रभु ने यह भाव देख रक्खे हैं कि अगर किसी का कडुवा वचन कान में पड़े तो उसे किस प्रकार टालना चाहिये ॥७५॥

चतुर्थ अध्याय

धैर्य धारण

—:o:—

अय मन! चाहे परमपद, उर धीरज गुण धार।
निन्दा स्तुति रिपु मित्रको, एकहि दृष्टि निहार ॥७६॥

हे मन! यदि तुझे मोक्षमार्ग की इच्छा है तो चित्त में धैर्य रूपी गुण (रस्सी) को बाँध ले निन्दा तथा स्तुति, शत्रु और मित्र को सम भाव से देख ॥७६॥

धीरज धर भ्रम को तजो, एह पुद्गल को ख्याल।
पर परछाँहि पर रही, तू तो चेतन लाल ॥७७॥

यह पुद्गलों का नाटक है इसलिये भ्रम को छोड़ दे (तेरी

इच्छा तो दूसरों पर हो रही है) परन्तु तू तो चैतन्य स्वरूप और परमात्मा की छाया है ॥७७॥

चंचलता को छोड़ दे, धीरज की कर हाट ।
कर विहार गुण माल को, ज्यूँ होवे बहु ठाट ॥७८॥

तू चञ्चलता को त्याग कर धीरज की दुकान कर ले, एवं गुण रूपी माल का व्यापार कर, जिससे बहुत लाभ होवे ॥७८॥

निज गुण में जिय ठहर तू, पर गुण पद मत धार ।
पर रमणि से राचि करि, मत कहलावे जार ॥७९॥

हे प्राणधारी ! तू अपने ही गुण में रमण करता रह, पराये गुण पर विश्वास कर, बेसुध न बन और परायी औरत की संगति करके "व्यभिचारी" इस कलंकित नाम को प्राप्त न कर ॥७९॥

तम रजनी नाशे नहीं, दीपक की कहि बात ।
पूरण ज्ञान उद्योत बिन, हृदय भरम नहिं जात ॥८०॥

रोशनी की बात मात्र कह देने से, रात का अन्धकार नहीं मिटता। क्योंकि पूरे ज्ञान के प्रकाश के बिना चित्त की शङ्का का समाधान नहीं होता ॥८०॥

यथा लाभ संतोष कर, चहे न कछु दिल बीच।
या विधि सुख अति अनुभवे, ज्यों न फँसे दुखकीच ॥८१॥

जिसकी इच्छा जिसको प्राप्त करने की होती है उसी से शान्ति प्राप्त कर लेते है, अतः जिनके चित्त में कोई वासना नहीं रही। इस प्रकार का मनुष्य बहुत आनन्द पाता है एवं दुःख रूपी कीचड़ में नहीं फँसता ॥८१॥

मोह जनित दुख विकलपन, अथवा सुख को रूप।
गिने दोहू सम धीर धर, तो न परै भव कूप ॥८२॥

जो मोह से उत्पन्न हुए दुःख और सुख की घबराहट व तकलीफ़ को धैर्य धारण कर समता प्राप्त कर ले तो संसार रूपी कुआ (जो जन्म मरण की खान है) है उसमें नहीं गिरता ॥८२

अपने-अपने गुणन में, थिर हैं सब ही वस्त।
तू पुनि थिर कर अपन को, तो सुख लहे समस्त ॥८३॥

सब ही चीजों में अपने-अपने गुण विद्यमान हैं; इसलिये तू भी अपने गुणों में खुद को मज़बूत बना लेगा तो तुझे तमाम सुख मिल जायेंगे ॥८३॥

दुख सुख दोनों फिरत हैं, धूप छाँह ज्यों मीत।
हर्ष शोक क्यों करहि मन, धीरज धार नचीत ॥८४॥

हे मित्र! सुख और दुःख ये दोनों छाया-धूप के समान फिरते रहते हैं; इसलिये हर्ष और शोक में न फँस, वरन निश्चिन्त हो कर धैर्य धारण कर ॥८४॥

अनहोनी होवे नहीं, होनी नहीं टलात।
दीखी परसी आगले, ज्यों होनी जा साथ ॥८५॥

जो नहीं होने वाला है वह कभी नहीं होगा और जो होनहार है वह होकर ही रहेगा; इसलिये जो होने वाला है उसका सामान आगे से तैयार मिलता है ॥८५॥

चाह किये कछु ना मिले, करिके जहँ तहँ देख।
चाह छाँडि धीरज धरहु, पद-पद मिलत विशेष ॥८६॥

हे! मनुष्य तू इच्छा करके देख ले कि इससे कुछ लाभ नहीं, किन्तु यदि इच्छा को छोड़ कर धीरज धारण कर लेवे तो तुझे

स्थान-स्थान पर अधिक प्राप्ति होगी ॥८६॥

सुनि उलझै मति रे जिया, कर विचार चुप साध।
यही अमोल औषधी, मिटे भव दुःख व्याध ॥८७॥

हे जीव ! तू सुन कर के चक्कर में मत पड़ किन्तु विचार करके चुप होजा क्योंकि यही सब बीमारियों को नाश करने-वाली अमूल्य दवा है कि जिससे संसार के जन्म मरण रूपी दुःख मिट जाते हैं ॥८७॥

रे चेतन ! संसार लखि, दृढ़ कर नेक विचार।
जैसे दे वैसा मिले, कूवे की गुँजार ॥८८॥

हे हिलने चलने वाले जीव ! तू इस दुनिया को देख कर मजबूत खयाल बनाले क्योंकि यहाँ तू जिस प्रकार पाप पुण्य करेगा वैसे ही कूप की प्रतिध्वनि के समान तुझे प्राप्त होगा ॥८८॥

चंचलता को छाँडि के, काट मोह गल फाँस।
सम यम दृढ़ता किये, निज गुण होय प्रकाश ॥८९॥

तू चपलता को छोड़ कर गले में पड़ी हुई मोह रूपी फाँसी को काट डाल क्योंकि शम, दम और नियम इन चारों भावों में चित्त स्थिर रहेगा तो अपने गुणों का उदय होगा ॥८९॥

अभिलाषा को त्याग कर, मन को रख मजबूत।
तब कछु सूझै अगम की, यह साँची करतूत ॥९०॥

पहले तू इच्छा को छोड़ कर अपने मन को मजबूत बना ले तब तुझे ईश्वर का ज्ञान होगा यही बात यथार्थ है ॥९०॥

वो तो धाँही वस्तु है, जाकी तोकूँ चाह।
चण इक धीरज धार ले, पडे सहज में पाँह ॥९१॥

जिस वस्तु की तुझे अत्यन्त आवश्यकता है वह तो यहीं भरी पड़ी है, अगर तू धीरज धारण कर ले तो वह अनायास ही तुझे प्राप्त हो जावेगी ॥९१॥

मत कर पर गुणमें रमण, ज्यों न लगे गल तोष।
निश्चल रह निज गुणन में, आपही होगी मोक्ष ॥९२॥

तू पराये गुणों को मत गा, जिससे पाप रूपी फाँसी तेरे गले में न पड़े, तू आपही के गुणों में डटा रह, जिससे तुझे अवश्य मोक्ष मिलेगा ॥९२॥

निश्चलता यूँ होयगी, रे जिय ब्रह्म समान।
तृण ही का घृत होय है, गाय चरे पयपान ॥९३॥

हे जीव ! यदि तू स्थिरचित्त होगा तो तू ईश्वर तुल्य हो जावेगा, क्योंकि गाय को घास चराने से ही घृत एवं दूध जैसे अमृत पदार्थ प्राप्त होते हैं ॥९३॥

जो तू चाहे अमर पद, करि दृढ़ता अखत्यार।
बाल न बाँका होयगा, जीवत ही मन मार ॥९४॥

अगर तू देव (मोक्ष में जाना) बनना चाहता है तो धैर्य को धारण कर ले। यदि तू पहले ही मन को मार ले तो तेरा केश भी तिरछा न होगा ॥९४॥

धीरज के धारण किये, सब ही दुख मिट जाय।
जैसे ठंडे लोह तें, ताता लोह कटाय ॥९५॥

धीरज के अपनाने से सब प्रकार के दुःखों का अन्त होता है जिस प्रकार ठंडा लोहा, गर्म लोहे को फौरन काट डालता है ॥९५॥

जिमि जल निर्मल मधुर मृदु, करत तप्त को अन्त।
इम धीरज गुण चार लखि, करो ग्रहण बुधवन्त ॥९६॥

जिस प्रकार जल में निर्मलता, मीठापन, नर्मी और गर्म वस्तु को शीतल करना ये चार गुण हैं; इस प्रकार धीरज में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ये चारों गुण विद्यमान हैं अतः पंडितों से ग्रहण करने योग्य है ॥९६॥

कला घटत अरु बढ़त है, नहिं शशि मंडल जान।
जन्म मरण गति देह की, यों लखि धीरज ठान ॥९७॥

जिस प्रकार केवल चंद्रमा की कला ही घटती बढ़ती है स्वयं चन्द्रमा घटता बढ़ता नहीं इसी प्रकार देह ही पैदा होता और नाश होता है आत्मा नहीं; इस बात का विचार कर धैर्य धारण कर ॥९७॥

सुख दुख दोनों एक से, है समझण को फेर।
एक शब्द दो अर्थ ज्यों, लाख टके की सेर ॥९८॥

दुःख और सुख दोनों समान वस्तु हैं ये भ्रम मात्र से अलग अलग प्रतीत होते हैं। जिस प्रकार एक ही शब्द दो अर्थ रखनेवाला हो इस प्रकार ये मिथ्या ही प्रकाशमान होते हैं॥९८॥

सुख दुख दोऊ वेदे मती, वेदे तो सम भाव।
जैसे मकरी जाल कौं, पूरे अरु खा जाय ॥९९॥

तू दुःख और सुख दोनों को मत मान, और माने तो समान भाव से मान। जिस प्रकार मकड़ी जाला तानती है और उसे आवश्यकतानुसार खा भी जाया करती है ॥९९॥

समता को धारण किये, क्यों न उटे मन लहर।
सुने गरुड की गर्जना, मिटे सर्प को जहर ॥१००॥

समता को धारण करने से मनकी गति अवश्य स्थिर हो जाती है। जिस प्रकार गरुड़ की आवाज सुन सांप का ज़हर आप ही ठंडा हो जाता है ॥१००॥

पंचम अध्याय

अनुभव-विचार

—:०:—

कूकश विषय विकार सम, मति भखि मूढ़ गँवार।
अनुभव रस तू चखि ले, गुरु मुख करि निर्धार ॥१०१॥

इन्द्रियों के विषय धान्य के छिलके के समान हैं; इसलिये तू इनका आहार मत कर किन्तु गुरुजी के मुखारविन्द से प्राप्त ज्ञानानुभवरस का स्वाद चख ॥१०१॥

किये पाठ अनुभव विना, मिटे न मनका पाप।
बाहर शीशी धोय के, करी चहे तू साफ ॥१०२॥

अनुभव के विना शास्त्रों को पढ़ने से मन का मैल नहीं मिटता। क्या बाहर की तरफ़ धो डालने से शीशी साफ़ हो जाती है ॥१०२॥

अल्प भार पाषाण को, जिमि लागत जल माँहि।
तिमि अनुभव विच कर्मको, बहु बंधन व्है नाहिं ॥१०३॥

जिस प्रकार जल में पत्थर का बोझ हलका मालूम होता है उसी प्रकार अनुभव हो जाने पर कर्म का बन्धन हलका पड़ जाता है ॥१०३॥

पाठ किये तें एक गुन, अनुभव किये हजार।
तातैं मनकूँ रोकि कैं, क्यों नै करै विचार ॥१०४॥

पाठ पढने से एक गुना ही रहता है परन्तु अनुभव करने से हजार गुना हो जाता है। इसलिये हे जीव! अपने मन को वश में करके विचार क्यों नहीं करता? अर्थात् पढ़े हुए पाठ का खूब मनन कर ॥१०४॥

मन वच तनै थिरतें भयो, जो सुख अनुभव माँहि।
इन्द नरिन्द फणीन्द के, ता समान सुख नाँहि ॥१०५॥

जो सुख मन वचन काया की स्थिरता से अन्तःकरण को मिलता है वह सुख न देवेन्द्र को है, न राजा को है, और न शेषनाग ही को ही है ॥१०५॥

अनुभव से प्रभु मिलत है, अनुभव सुख का मूल।
अनुभव चिंतामणि तजि, मति भटके कहुँ भूल॥१०६॥

केवल अनुभव से ही ईश्वर की प्राप्ति होती है, सिर्फ अनुभव ही सुख की जड़ है; इसलिये अनुभव रूपी चिन्तामणी को छोड़ कर तू गलती से इधर-उधर न भटक ॥१०६॥

अति अगाध संसार नद, विषय नीर गम्भीर।
अनुभव विन नहीं पार व्हे, कोटि करहु तदवीर ॥१०७॥

यह संसार रूपी महानद विषय रूपी जल से भरा हुआ है वह बहुत गहरा है यह बिना अनुभव (तजरवे) के नहीं तेरा जा सकता ॥१०७॥

षष्ठम अध्याय

मानव जीवन की सफलता

—:o:—

जिहिं विचारतें पाइहैं, मन को थिर सुख ठौर ।
ताको अनुभव जानिये, नहिं अनुभव कछु और ॥१०८॥

जिस प्रकार के विचार से मन को स्थायी सुखका स्थान मिलता है उसी का नाम अनुभव है, किसी अन्य का नहीं॥१०८॥

विना विचारे ज्ञान के, तू जंगल का रोझ ।
मिथ्या यों ही पचत है, क्यों न करे अब खोज ॥१०९॥

ज्ञान का विचार किये विना तू जंगल के रोझ नामक जानवर के समान है और फिजूल ही मिहनत करता है । तू उसकी तलाश क्यों नहीं करता, अब भी कर ॥१०९॥

मन मतंग वसि करन को, ज्ञानांकुश चित धार ।
क्षमा थम्ब से बाँध कर, लज्जा शृंखल डार ॥११०॥

मन रूपी मत्त हाथी को वश में करने के लिये तू ज्ञान रूपी अंकुश को चित्त रूपी हाथ में पकड़ ले, फिर उसे क्षमा रूपी थम्बे से बाँध कर लाज रूपी साँकल से जकड़ दे ॥११०॥

भ्रम तो मन रवि डाट ले, ज्ञान मुकुर के म्यान ।
विन्दु सम उपयोग सें, कर्म तूल की हान ॥१११॥

तू भ्रमण करते मन रूपी सूर्य को ज्ञान रूपी दर्पण के द्वारा डाट दे क्योंकि इसके अणु मात्र सदुपयोगसे कर्म रूपी तुश भस्म

हो जायेंगे ॥१११॥

सीसा सम संसार है, गुरू कृपा आदित्य।
ज्ञान नेत्र बिन किम लखे, आपु नयो सु पवित्र ॥११२॥

यह जगत काँच की तरह है और गुरु की कृपा सूर्य के समान है इसलिये ज्ञान रूपी आँखों के बिना आत्म-ज्ञान किस प्रकार प्राप्त हो सकता है ॥११२॥

विषय वासना करत जो, आवे ज्ञान जगीस।
त्रेसठ का उन समय में, छिन में होय छतीस ॥११३॥

जब परमेश्वर का ज्ञान उदय होता है तब विषय की इच्छाएँ एक दम उलट जाती हैं उस समय त्रेसठ का अङ्क उलट कर ३६ बन जाता है (यानी दूर हो जाते हैं) ॥११३॥

जो तु चाहे ज्ञान सुख, तो विषयन मन फेर।
और ठौर भटके मती, अपने ही में हेर ॥११४॥

यदि तुझे ज्ञान रूपी सुख की प्राप्ति चाहता है तो तू मन को विषयों की इच्छा से फेर ले। तुझे जगह-जगह भटकने की आवश्यकता नहीं। ढूँढने पर तू उसे अपने अन्तःकरण में प्राप्त कर लेगा ॥११४॥

ज्ञान रूप दीपक बने, बचे न कर्म पतंग।
जो रहतो दोनून में, झूँठो एक प्रसंग ॥११५॥

यदि ज्ञान रूपी दीपक प्रज्वलित मौजूद है तो कर्म रूपी पतङ्ग अवश्य भस्म हो जायगा। किन्तु यदि ज्ञान रूपी दीपक निर्बल हुआ तो कर्म रूपी पतङ्ग उसे पल भर में बुझा देगी ॥११५॥

षष्ठम अध्याय

मानव जीवन की सफलता

—:o:—

जिहिं विचारतें पाइहैं, मन को थिर सुख ठौर।
ताको अनुभव जानिये, नहिं अनुभव कछु और ॥१०८॥

जिस प्रकार के विचार से मन को स्थायी सुखका स्थान मिलता है उसी का नाम अनुभव है, किसी अन्य का नहीं॥१०८॥

बिना विचारे ज्ञान के, तू जंगल का रोझ।
मिथ्या यों ही पचत है, क्यों न करे अब खोज ॥१०९॥

ज्ञान का विचार किये बिना तू जंगल के रोझ नामक जानवर के समान है और फिजूल ही मिहनत करता है। तू उसकी तलाश क्यों नहीं करता, अब भी कर ॥१०९॥

मन मतंग बसि करन को, ज्ञानांकुश चित धार।
क्षमा थम्ब से बाँध कर, लज्जा शृंखल डार ॥११०॥

मन रूपी मत्त हाथी को वश में करने के लिये तू ज्ञान रूपी अंकुश को चित्त रूपी हाथ में पकड़ ले, फिर उसे क्षमा रूपी थम्बे से बाँध कर लाज रूपी साँकल से जकड़ दे ॥११०॥

भ्रम तो मन रवि डाट ले, ज्ञान मुकुर के म्यान।
विन्दु सम उपयोग से, कर्म तूल की हान ॥१११॥

तू भ्रमण करते मन रूपी सूर्य को ज्ञान रूपी दर्पण के द्वारा डाट दे क्योंकि इसके अणु मात्र सदुपयोगसे कर्म रूपी तुश भस्म

हो जायेंगे ॥१११॥

सीसा सम संसार है, गुरू कृपा आदित्य।
ज्ञान नेत्र बिन किम लखे, आपु नयो सु पवित्र॥११२॥

यह जगत काँच की तरह है और गुरु की कृपा सूर्य के समान है इसलिये ज्ञान रूपी आँखों के बिना आत्म-ज्ञान किस प्रकार प्राप्त हो सकता है ॥११२॥

विषय वासना करत जो, आवे ज्ञान जगीस।
त्रेसठ का उन समय में, छिन में होय छतीस॥११३॥

जब परमेश्वर का ज्ञान उदय होता है तब विषय की इच्छाएँ एक दम उलट जाती हैं उस समय त्रेसठ का अङ्क उलट कर ३६ बन जाता है (यानी दूर हो जाते हैं) ॥११३॥

जो तू चाहे ज्ञान सुख, तो विषयन मन फेर।
और ठौर भटके मती, अपने ही में हेर॥११४॥

यदि तुझे ज्ञान रूपी सुख की प्राप्ति चाहता है तो तू मन को विषयों की इच्छा से फेर ले। तुझे जगह-जगह भटकने की आवश्यकता नहीं। ढूँढने पर तू उसे अपने अन्तःकरण में प्राप्त कर लेगा ॥११४॥

ज्ञान रूप दीपक बने, बचे न कर्म पतंग।
जो रहतो दोनून में, झूँठो एक प्रसंग॥११५॥

यदि ज्ञान रूपी दीपक प्रज्वलित मौजूद है तो कर्म रूपी पतङ्ग अवश्य भस्म हो जायगा। किन्तु यदि ज्ञान रूपी दीपक निर्बल हुआ तो कर्म रूपी पतङ्ग उसे पल भर में बुझा देगी ॥११५॥

ज्ञान संचरे जिहि समें, रहे न कर्म समाज।
और न पंछी उड सके, जहाँ बसेरा बाज ॥११६॥

जिस समय ज्ञान का प्रकाश होता है उस समय कर्म बन्धन नहीं टिकते। जैसे जिस स्थान पर बाज का घोंसला होता है वहाँ कोई अन्य पत्ती नहीं रह सकता ॥११६॥

घर नहिं छुट्यो एक सों, छुट्यो कर्म कुढंग।
ज्ञान तणे सत्संग थी, देखो ठाणायंग ॥११७॥

जब तक कर्मों की विपरीतता नहीं गई तब तक घर कदापि नहीं छूट सकता चाहे कितना ही ज्ञान सुनो और साधुओं की संगति भी करो। ऐसा ठाणायंग सूत्र में लिखा है ॥११७॥

त्तण इक ज्ञान विचार ले, विषय दृष्टि को फेर।
मेरी मेरी त्याग दे, यों होवे सुरस्फेर ॥११८॥

यदि एक पल भर ज्ञान का विचार कर ले और सब विषय वासनाओं से नज़र को हटा ले और अहंभाव ममता को त्याग दे तो सब कुछ आप से आप ठीक हो जायगा ॥११८॥

आठ पहर ढिंग राख ले, ज्ञान सरूपी ढाल।
मोह अरी के विषय पर, लगे न ताकी भाल ॥११९॥

तू अपने पास हर समय ज्ञान रूपी ढाल को रख जिससे मोह रूपी शत्रु के तीर तेरे मस्तक पर न लगें ॥११९॥

माया मोह निवार के, विषयन सों मन खींच।
जो सुख चाहे आपणो, रहो ज्ञान के बीच ॥१२०॥

हे मित्र! यदि तुझे आत्मानन्द को प्राप्त करने की इच्छा है तो विषयों से अपने मन को अलग कर एवं ज्ञान के अन्दर उसे डुबो दे ॥१२०॥

भेद लहे बिन ज्ञान के, मत भूसे जिमि स्वान ।
लोक गडरिया चाल तज, आपन पो पहिचान ॥१२१॥

तू ज्ञान के भेद को जाने बिना कुत्ते की तरह वृथा बकवाद मत कर। भेड़ की तरह नकल करनेवाली चाल को छोड़ कर तू आत्म ज्ञान की जानकारी कर ॥१२१॥

काम धेनु अरु कल्पतरु, इण भव सुख दातार ।
इण भव पर भव दुहन में, ज्ञान करत निस्तार ॥१२२॥

कल्पवृक्ष और कामधेनु इसी जन्म में सुख देनेवाले होते हैं। लेकिन ज्ञान इस लोक और पर लोक दोनों में सुख देने वाला है ॥१२२॥

जगत मोह फाँसी प्रबल, कटत न और उपाय ।
सत्संगति करि ज्ञान की, सहज मुक्ति हो जाय ॥१२३॥

मोह की फाँसी बड़ी मज़बूत है और यह ऐरे गैरे उपायों से नहीं काटी जा सकती। इसके काटने का केवल एक ही सत्संगति रूपी उपाय है अगर यह उपाय सिद्ध हुआ तो वह दृढ़ बन्धन एकदम कट जायगा यानी मुक्ति सहज में प्राप्त हो जायगी ॥१२३॥

बिच पारस अरु ज्ञान के, अन्तर जान महन्त ।
यह लोहा कंचन करत, वह गुण देय अनन्त ॥१२४॥

पारस, पाषाण और ज्ञान में बड़ा भेद है। यह तो लोहे को सुवर्ण ही बनाता है किन्तु वह मनुष्य में अपार गुण भर देता है ॥१२४॥

प्रथम ज्ञान पीछे दया, यह जिन मत को सार।
ज्ञान सहित किरिया करूँ, तब उतरूँ भव पार ॥१२५॥

जैन सिद्धान्त में पहले ज्ञान पीछे दया ऐसा कहा है; इसलिये यदि मैं ज्ञान के साथ क्रिया करूँगा तो अवश्य संसार को तर जाऊँगा, ऐसा जानो ॥१२५॥

ग्रंथ प्रशस्तिः

—:०:—

अति आलस परमादियो, भज्जुलाल मुझ नाम।
ज्ञानोद्यम कछु ना बने, किम सुधरे मुझ काम ॥१२६॥

मैं बड़ा आलसी और बेपरवाह हूँ। मेरा नाम भज्जुलाल है अगर मैं ज्ञान का कुछ भी उद्योग नहीं कर सका तो फिर मेरा कार्य कैसे सिद्ध हो सकता है ॥१२६॥

दर्शन पुनि निश्चल नहीं, नहिं निश्चल चारित्र।
मन भ्रमतो निशदिन रहे, नहिं ठहरे एकत्र ॥१२७॥

मेरा न दर्शन ठिकाने पर है न चरित्र ही अपनी मर्यादा में है। मन भी आठों पहर चक्कर लगाता रहता है ऐसी हालत में कुछ किये नहीं बनता ॥१२७॥

ऐसी करी विचारणा, रे जिय अब तो चेत।
च्यार चरण गुरु रतनजी, ऐसी करो संकेत ॥१२८॥

हे जीव ! रत्न रूपी श्री गुरुदेव ने चार वर्णों के साथ प्रथक्-प्रथक् भावनाएँ मुकर्रर कर दी हैं इसलिये तू अपने वर्णाश्रम धर्म पर दृढ़ रह ॥१२८॥

चार वर्ण गुरु रतनजी, तासु भेद चौबीस ।
तामें भेद जु तेरवें, करी ज्ञान बकसीस ॥१२९॥

उन्हीं गुरु रत्न ने उन चार भेदों के छः-छः उपभेद कर के चौबीस भेद बनाये हैं । उन उपभेदों के तेरहवें अंग में ज्ञान का बखान किया है ॥१२६॥

अरिहन्त सिद्ध गणईशजी, उपाध्याय सब साध ।
पंच परम गुरु दीजिये, निर्मल ज्ञान समाध ॥१३०॥

श्री अरिहन्त भगवान, सिद्ध परमात्मा, आचार्यजी महाराज, उपाध्यायजी, एवं अन्य सब साधु ये पंच परमेष्ठी प्रभु मेरे चित्त में शुद्ध भावना प्रगट करें, यह आवश्यक विनय है ॥१३०॥

नीतिसार

शुभ तरुवर ज्यों एक ही, फूल्यो फल्यो सुवास ।
सब वन आमोदित करे, त्यों सपूत गुणरास ॥१॥

जिस प्रकार फूला फला तथा सुगन्धित एकहि वृक्ष सब वन को सुगन्धित कर देता है, इसी प्रकार गुणों से युक्त एक भी सपूत लड़का पैदा होकर कुल की शोभा को बढ़ा देता है ॥१॥

जिनके सुत पंडित नहीं, नहीं भक्त निकलंक ।
अन्धकार कुल जानिये, जिमि निशि विना मयंक ॥

जिसका पुत्र न तो पंडित है, न भक्ति करनेवाला है और न निष्कलङ्क (कलङ्क रहित) ही है, उसके कुल में अन्धेरा ही जानना चाहिये, जैसे चन्द्रमा के बिना रात्रि में अन्धेरा रहता है ॥२॥

निशि दीपक शशि जानिये, रवि दिन दीपक जान।
तीन भुवन दीपक धरम, कुल दीपक सुत जान ॥३॥

रात्रि का दीपक चन्द्रमा है, दिन का दीपक सूर्य है, तीनों लोगों का दीपक धर्म है और कुल का दीपक सपूत लड़का है ॥३॥

एकहि अक्षर शिष्य को, जो गुरु देत बताय।
धरती पर द्रव्य नहिं, जिहिं दे ऋण उतराय ॥४॥

गुरु कृपा कर के चाहे एक ही अक्षर शिष्य को सिखलावे भी उसके उपकार का बदला उतारने के लिये कोई धन संसार नही है, अर्थात् गुरु के उपकार के बदले में शिष्य किसी वस्तु को देकर उऋण नहीं हो सकता है ॥४॥

भज्जू पूज्य प्रसाद से, हुआ हिन्दि अनुवाद।
अनुचित आप सुधारिये, यही रतन फरियाद ॥

॥ इति शुभम् ॥

—:०:—

काव्य विलास

श्री परमात्म छत्तीसी

दोहे

परम देव परमातमा, परम ज्योति जगदीस।
परम भाव उर आन के, प्रणमत हूं नमिशीस ॥१॥
एक ज्यों चेतन द्रव्य है, जिनके तीन प्रकार।
बहिरातम अन्तर तथा, परमातम पद सार ॥२॥
बहिरातम उसको कहे, लखै न आत्म स्वरूप।
मग्न रहे परद्रव्य में, मिथ्यावंत अनूप ॥३॥
अंतर-आतम जीव सो, सम्यग्‌दृष्टी होय।
चौथे अरु पुनि बारवें, गुणथानक लो सोय ॥४॥
परमातम पद् ब्रह्मको, प्रकट्यो शुद्ध स्वभाव।
लोकालोक प्रमान सब, झलकै जिनमें आय ॥५॥
बहिरातमा स्वभाव तज, अंतरातमा होय।
परमातम पद भजत है, परमातम है सोय ॥६॥
परमातम सो आतमा, और न दूजो कोय।
परमातम को ध्यावते, यह परमातम होय ॥७॥
परमातम यह ब्रह्म है, परम ज्योति जगदीश।
परसे भिन्न विलोकिये, ज्योति अलख सोइ ईश ॥८॥

श्री ब्रह्मविलास में से साभार उद्धृत।

जो परमात्मा सिद्धमें, सो ही यह तन माहिं।
मोह मैल दृग लग रहा, जिससे सूझे नाहिं ॥९॥
मोह मैल रागादिका, जा क्षण कीजे नाश।
ता क्षण यह परमातमा, आपहि लहे प्रकाश ॥१०॥
आतम सो परमातमा, परमातम सो सिद्ध।
बीचकी दुविधा मिट गई, प्रकट हुई निज रिद्ध ॥११॥
मैं ही सिद्ध परमातमा, मैं ही आत्माराम।
मैं हो ज्ञाता ज्ञेय को, चेतन मेरो नाम ॥१२॥
मैं अनंत सुख को धनी, सुखमय मुझ्नसभाव।
अविनाशी आनंदमय, सो हूँ त्रिभुवन राय ॥१३॥
शुद्ध हमारो रूप है, शोभित सिद्ध समान।
गुण अनंत से युक्त यह, चिदानंद भगवान ॥१४॥
जैसो सिद्ध क्षेत्रे बसै, वेसो यह तनमाहिं।
निश्चय दृष्टि निहारते, फेर रंच कुछ नाहिं ॥१५॥
कर्मन के संयोग से, भये तीन प्रकार।
एक आतमाद्रव्य को, कर्म नचावन हार ॥१६॥
कर्म संघाती आदि के, जोर न कछू वसाय।
पाई कला विवेक की, रागद्वेष विन जाय ॥१७॥
कर्मों की जड़ राग है, राग जरे जड़ जाय।
प्रकट होय परमातमा, भैया सुगम उपाय ॥१८॥
काहे को भटकत फिरे, सिद्ध होने के काज।

राग द्वेष को त्याग दे, भैया सुगम इलाज ॥१९॥
परमातम पद को धनी, रंक भयो विललाय।
रागद्वेष की प्रीति से, जनम अकारथ जाय ॥२०॥
राग द्वेष की प्रीति तुम, भूलि करो जिय रंच।
परमातम पद ढांक के, तुमहिं किये तिरजंच ॥२१॥
जप तप संयम सब भलो, राग द्वेष जो नाहिं।
राग द्वेष के जागते, ये सब सोये जाहिं ॥२२॥
रागद्वेष के नाशते, परमातम परकाश।
रागद्वेष के जागते, परमातम पद नाश ॥२३॥
जो परमातम पद चहै, तो तू राग निवार।
देख सयोगी स्वामि को, अपने हिये विचार ॥२४॥
लाख बात की बात यह, तुझको दिनी बताय।
जो परमातम पद चहै, राग द्वेष तज भाय ॥२५॥
रागद्वेष के त्याग बिन, परमातम पद नाहिं।
कोटि-कोटि जप तप करे, सबहि अकारथ जाहि॥२६॥
दोष है यह आत्मको, रागद्वेष का संग।
जैसे पास मजीठ के, वस्त्र और ही रंग ॥२७॥
वैसे आतम द्रव्य को, रागद्वेष के पास।
कर्मरंग लागत रहे, कैसे लहे प्रकाश ॥२८॥
इन कर्मों का जीतना, कठिन बात है मीत।
जड़ खोदे बिन नहिं मिटे, दुष्ट जाति विपरीत॥२९॥

लह्योपत्तो के किये, ये मिटने के नाहिं।
ध्यान अग्नि परकाश के, होम देऊं तिहि मांहिं ॥३०॥
ज्यों दारूके गंजको, नर नहिं सके उठाय।
तनक आग संयोग से, क्षण इक में उड़ जाय ॥३१॥
देह सहित परमातमा, यह अचरज की बात।
रागद्वेष के त्याग तैं, कर्मशक्ति जर जात ॥३२॥
परमात्मा के भेद द्वय, रूपी अरूपी मान।
अनंत सुखमें एक से, कहने के दो स्थान ॥३३॥
भैया वह परमातमा, वैसा है तुम माहिं।
अपनी शक्ति सम्हाल के, लखो वेग ही ताहिं ॥३४॥
रागद्वेष को त्याग के, धर परमातम ध्यान।
ज्यौं पावे सुख संपदा, 'भैया' इम कल्यान ॥३५॥
संवत विक्रम भूप को, सत्रह से पंचास।
मार्गशीर्ष रचना करी, प्रथम पक्ष दुति जास ॥३६॥

कर्म नाटक के दोहे

कर्म नाट नृत्य तोड़ के, भये जगत जिन देव;
नाम निरंजन पद लह्यो, करूँ त्रिविधि तिहिं सेव ॥१॥
कर्मन के नाटक नटत, जीव जगत के मांहि।
उनके कुछ लक्षण कहूँ, जिन आगम की छांहिं ॥२॥
तीन लोक नाटक भवन, मोह नचावन हार।

नाचत है जिव स्वांगधर, कर कर नृत्य अपार ॥३॥
नाचत है जिव जगत में, नाना स्वांग बनाय ।
देव नर्क तिरजंच अरु, मनुष्य गति में आय ॥४॥
स्वांग धरे जब देव को, मानत है निज देव ।
वही स्वांग नाचत रहै, ये अज्ञान की टेव ॥५॥
और न को औरहि कहै, आप कहै हम देव ।
अह के स्वांग शरीर का, नाचत है स्वयमेव ॥६॥
भये नरक में नारकी, करने लगे पुकार ।
छेदन भेदन दुःख सहे, यही नाच निरधार ॥७॥
मान आपको नारकी, त्राहि त्राहि नित होत ।
यह तो स्वांग निर्वाह है, भूल करो मत कोय ॥८॥
नित अध गति निगोद है, तहां बसत जो हंस ।
वे सब स्वांग हि खेल के, विचित्र धर्यो यह वंश ॥९॥
उछर उछर के गिर पड़े, वे आवे इस ठौर ।
मिथ्यादृष्टि स्वभाव धर, यही स्वांग शिरमौर ॥१०॥
कबहू पृथिवी काय में, कबहू अग्नि स्वरूप ।
कबहू पानी पवन में, नाचत स्वांग अनूप ॥११॥
वनस्पति के भेद बहू, श्वास अठारह वार ।
तामें नाच्यो जीव यह, धर धर जन्म अपार ॥१२॥
विकलत्रय के स्वांग में, नाचे चेतन राय ।
उसी रूप परिणाम गये, वरने कैसे जाय ? ॥१३॥

उपजै आय मनुष्य में, धरैं पंचेन्द्रिय स्वांग।
मद आठों में मग्न बन, मातो खाई भांग ॥१४॥
पुण्य योग भूपति भये, पाप योग भये रंक।
सुख दुख आपहि मान के, नाचन फिरे निशंक॥१५॥
नारि नपुंसक नर भये, नाना स्वांग रमाय।
चेतन से परिचय नहीं, नाच नाच खिर जाय।
ऐसे काल अनंत से, चेतन नाचत तोहि।
'अज' हूं आप संभारिये, सावधान किन होहि ॥१७॥
सावधान जो जिव भये, ते पहुँचे शिव लोक।
नाच भाव सब त्याग के, बिलसत सुख के थोक॥१८॥
नाचत है जग जीव जो, नाना स्वांग रमंत।
देखत है उस मृत्य को, सुख अनंत बिलसंत ॥१९॥
जो सुख होवे देखकर, नाचन में सुख नाहिं।
नाचन में सब दुःख हैं, सुख निज देखन मांहि ॥२०॥
नाटक में सब नृत्य है, सार वस्तु कछु नांहि।
देखो उसको कौन है? नाचन हारे मांहि ॥२१॥
देखे उसको देखिये, जाने उसको जान।
जो तुझको शिव चाहिये, तो उसको पहिचान॥२२॥
प्रकट होत परमात्मा, ज्ञान दृष्टि के देत।
लोकालोक प्रमाण सब, क्षण इकमें लखलेत ॥२३॥
भैया नाटक कर्मतें, नाचत सब संसार।
नाटक तज न्यारे भये, वे पहुँचे भवपार ॥२४॥

॥ मन विजय के दोहे ॥

दर्शन ज्ञान चारित्र जिहं, सुख अनंत प्रतिभास ।
वंदन हो उन देव को, मन धर परम हुलास ॥१॥
मन से वंदन कीजिये, मनसे धरिये ध्यान ।
मन से आत्मा तत्त्व को, लखिये सिद्ध समान ॥२॥
मन खोजत है ब्रह्म को, मन सब करे बिचार ।
मन बिन आत्मा तत्त्व का, कौन करे निरधार ॥३॥
मन सम खोजी जगत में, और दूसरो कौन ?
खोज ग्रहे शिवनाथ को, लहै सुखन को भौन ॥४॥
जो मन सुलटे आपको, तो सूझे सब सांच ।
जो उलटै संसार को, तो सब सूझै कांच ॥५॥
सत असत्य अनुभव उभय, मनके चार प्रकार ।
दोय झुकै संसार को, दो पहूँचावे पार ॥६॥
जो मन लागे ब्रह्म को, तो सुख होय अपार ।
जो भटके भ्रम भाव में, तो दुख पार न वार ॥७॥
मन से बली न दूसरो, देख्यो इहि संसार ।
तीन लोक में फिरत ही, जात न लागे बार ॥८॥
मन दासों का दास है, मन भूपन का भूप ।
मन सब बातनियोग्य है, मनकी कथा अनूप ॥९॥
मन राजा की सैन सब, इन्द्रिन से उमराव ।
रात दिनां दौड़त फिरे, करे अनेक अन्याव ॥१०॥

इन्द्रिय से उमराव जिह, विषय देश विचरंत।
भैया उस मन भूप को, को जीते बिन संत ॥११॥
मन चंचल मन चपल अति, मन बहु कर्म कमाय।
मन जीते विन आतमा, मुक्ति कहो किम थाय ॥१२॥
मन सम योद्धा जगत में, और दूसरा नाहिं।
ताहि पछाड़े सो सुभट, जीत लहे जग मांहि ॥१३॥
मन इन्द्रिन को भूप है, ताहि करे जो जेर।
सो सुख पावे मुक्ति के, इसमें कछ् न फेर ॥१४॥
जब मन मूंद्यो ध्यान में, इन्द्रिय भई निराश।
तब इह आत्मा ब्रह्मको, कीने निज परकाश ॥१५॥
मनसे मूरख जगत में, दूजो कोन कहाय?
सुख समुद्र को छोड़के, विष के वन में जाय ॥१६॥
विष भक्षण से दुःख बढे, जाने सब संसार।
तदपि मन समझे नहीं, विषयन से अति प्यार॥१७॥
छहों खंड के भूप सब, जीत किये निज दास।
जो मन एक न जीतियो, सहे नर्क दुख वास ॥१८॥
छोड़ घास की झूंपड़ी, नहीं जगत सों काज।
सुख अनंत बिलसंत है, मन जीते मुनिराज १९॥
अनेक सहस्र अपछरा, बत्तिस लक्ष विमान।
मन जीते विन इन्द्र भी, सहे गर्भ दुःख आन ॥२०॥
छांड घरहि वनमें वसै, मन जीतन के काज।

तो देखो मुनिराज ज्यों, बिलसत शिवपुर राज ॥२१॥
अरि जीतन को जोर है, मन जीतन को खाम।
देख त्रिखंडी भूप को, पड़त नर्क के धाम ॥२२॥
मन जीते जो जगत में, वे सुख लहे अनन्त।
यह तो बात प्रसिद्ध है, देख्यो श्री भगवंत ॥२३॥
देख बड़े आरंभ से, चक्रवर्ति जग मांहि।
फेरत ही मन एक को, चले मुक्ति में जाहिं ॥२४॥
बाह्य परिग्रह रंच नहिं, मनमें धरे विकार।
तांदुल मच्छ निहालिए, पड़े नरक निरधार ॥२५॥
भावन ही से बंध है, भावन ही से मुक्ति।
जो जाने गति भाव की, सो जाने यह युक्ति ॥२६॥
परिग्रह करन मोक्ष को, इम भाख्यो भगवान।
जिह जिय मोह निवारियो, तिहिं पायो कल्यान ॥२७॥

ईश्वर-निर्णय दोहे

परमेश्वर जो परमगुरु, परमज्योति जगदीश।
परमभाव उर आनके, वंदत हूं नमि शीश ॥१॥
ईश्वर ईश्वर सब कहै, ईश्वर लखे न कोय।
ईश्वर को सो ही लखे, जो समदृष्टी होय ॥२॥
ब्रह्मा विष्णु महेश जो, वे पाये नहिं पार।
तो ईश्वर को और जन, क्यों पावे निरधार? ॥३॥

ईश्वर की गति अगम है, पार न पायी जाय।
वेद स्मृति सब कहत है, नाम भजोरे भाय ॥४॥
ईश्वर को तो देह नहिं, अविनाशी अविकार।
ताहि कहै शठ देह धर, लीनो जग अवतार ॥५॥
जो ईश्वर अवतार लें, मरे बहु पुनः सोय।
जन्म मरन जो धरत है, सो ईश्वर किम होय ॥६॥
एकनकी घां होयकैं, मरे एक ही आन।
ताको जो ईश्वर कहैं, वे मूरख पहिचान ॥७॥
ईश्वर के सब एक से, जगत मांहि जे जीव।
नहिं किसी पर द्वेष है, सब पैं शांत सदीव ॥८॥
ईश्वर से ईश्वर लड़े, ईश्वर एक कि दोय।
परशुराम अरु राम को, देखहु किन जग लोय ॥९॥
रौद्र ध्यान वर्तें जहां, वहां धर्म किम होय।
परम बंध निर्दय दशा, ईश्वर कहिये सोय? ॥१०॥
ब्रह्मा के खरशीस हो, ता छेदन कियो ईस
ताहि सृष्टिकर्ता कहे, रख्यो न अपनो सीस ॥११॥
जो पालक सब सृष्टि को, विष्णु नाम भूपाल।
जो मार्यो इक बाण सैं, प्राण तजे ततकाल ॥१२॥
महादेव वर दैत्य को, दीनों होय दयाल।
आपन पुनः भाग्यो फिर्यो, राख लियो गोपाल ॥१३॥
जिनको जग ईश्वर कहै, वह तो ईश्वर नाहिं।
ये हू ईश्वर ध्यावते, सो ईश्वर घट मांहिं ॥१४॥

ईश्वर सोही आतमा, जाति एक है तंत।
कर्म रहित ईश्वर भये, कर्म सहित जगजंत ॥१५॥
जो गुण आतम द्रव्य के, सो गुण आतम माहिं।
जड़के जड़में जानिये, यामें तो भ्रम नाहिं ॥१६॥
दर्शन आदि अनंत गुण, जीव धरै तीन काल।
वर्णादिक पुद्गल धरै, प्रकट दोनों की चाल ॥१७॥
सत्यारथ पथ छोड़ के, लगे मृषा की ओर।
ते मूरख संसार में, लहै न भव को छोर ॥१८॥
भैया ईश्वर जो लखे, सो जिय ईश्वर सोय।
यों देख्यो सर्वज्ञने, यामें फेर न कोय ॥१९॥

कर्ता अकर्ता के दोहे

कर्मन को कर्ता नहीं, धरता शुद्ध सुभाय।
ता ईश्वर के चरन को, बंदू शीस नमाय ॥१॥
जो ईश्वर करता कहैं, भुक्ता कहिये कौन?
जो करता सो भोगता, यही न्यायको भौन ॥२॥
दोनों दोष से रहित है, ईश्वर ताको नाम।
मन वच शीस नवाय के, करूं ताहि परिणाम ॥३॥
कर्मन को कर्ता है वह, जिसको ज्ञान न होय।
ईश्वर ज्ञान समूह है, किम कर्ता है सोय ॥४॥
ज्ञानवंत ज्ञानहिं करें, अज्ञानी अज्ञान।

जो ज्ञाता कर्ता कहै, लगे दोष असमान ॥५॥
ज्ञानी पै जड़ता कहां, कर्त्ता ताको होय।
पंडित हिये विचार के, उत्तर दीजे सोय ॥६॥
अज्ञानी जड़तामयी, करे अज्ञान निशंक।
कर्ता भुगता जीव यह, यों भाखे भगवंत ॥७॥
ईश्वर की जिव जात है, ज्ञानी तथा अज्ञान।
जो जीव को कर्त्ता कहो, तो है बात प्रमान ॥८॥
अज्ञानी कर्त्ता कहे, तो सब बने बनाव।
ज्ञानी हो जड़ता करे, यह तो बने न न्याव ॥९॥
ज्ञानी करता ज्ञान को, करे न कहुं अज्ञान।
अज्ञानी जड़ता करे, यह तो बात प्रमान ॥१०॥
जो कर्ता जगदीश है, पुण्य पाप क्यों होय ?
सुख दुःख किसको दीजिये ? न्याय करो बुध लोय ॥११
नरकन में जिव डारिये, पकड़ पकड़ के बांह।
जो ईश्वर करता कहो, तिनको कहा गुनाह ॥१२॥
ईश्वर की आज्ञा बिना, करत न कोऊ काम।
हिंसादिक उपदेश को, कर्त्ता कहिये राम ॥१३॥
कर्त्ता अपने कर्म को, अज्ञानी निर्धार।
दोष देत जगदीश को, यह मिथ्या आचार ॥१४॥
ईश्वर तो निर्दोष है, करता भुक्ता नाहिं।
ईश्वर को कर्ता कहै, वे मूरख जगमाहिं ॥१५॥

ईश्वर निर्मल मुकुरवत्, तीन लोक आभास ।
सुख सत्ता चैतन्य मय, निश्चय ज्ञान विलास ॥१६॥
जाके गुण तामें बसैं, नहीं और में होय ।
सूधी दृष्टि विलोकतें, दोष न लागे कोय ॥१७॥
वीतराग बाणी विमल, दोष रहित त्रिकाल ।
ताहि लखै नहिं मूढ़ जन, झूठे गुरु के बाल ॥१८॥
गुरु अंधे शिष्य अंधकी, लखै न बाट कुबाट ।
बिना चक्षु भटकत फिरै, खुलै न हिये कपाट ॥१९॥
जोलों मिथ्यादृष्टि है, तोलों कर्त्ता होय ।
सो हू भावित कर्मको, दर्वित करे न कोय ॥२०॥
दर्व कर्म पुद्गलमयी, कर्त्ता पुद्गल तास ।
ज्ञान दृष्टि के होत ही, सूझै सब परकाश ॥२१॥
जोलों जीव न जानही, छहों काय के वीर ।
तौलों रक्षा कौन की, कर है साहस धीर ॥२२॥
जानत है सब जीव की, मानत आप समान ।
रक्षा यातैं करत है, सबमें दरसन ज्ञान ॥२३॥
अपने अपने सहज के, कर्त्ता है सब दर्व ।
मूल धर्म को यह है, समझ लेहु जिय सर्व ॥२४॥
'भैया' बात अपार है, कहं कहां लों कोय ।
थोड़े ही में समझियो, ज्ञानवंत जो होय ॥२५॥

वैराग्य-बोध के दोहे

रागादिक दूषण तजे, वैरागी जिनदेव।
मन वच शीस नमाय के, कीजे तिनकी सेव ॥१॥
जगत मूल यह राग है, मुक्ति मूल वैराग।
मूल दोनों के ये कहे, जाग सके तो जाग ॥२॥
क्रोध मान माया धरत, लोभ सहित परिणाम।
येही तेरे शत्रु है, समझो आत्माराम ॥३॥
इन ही चारों शत्रु को, जो जीते जग मांहि।
सो पावे पथ मोक्ष को, यामें धोखो नाहिं ॥४॥
जो लक्ष्मी के काज तू, खोवत है निज धर्म।
सो लक्ष्मी संग ना चले, काहे भूलत भर्म ॥५॥
जो कुटुम्ब के कारने, करत अनेक उपाय।
सो कुटुंब अगनी लगा, तुझको देत जलाय ॥६॥
पोषत है जिस देह को, जोग त्रिविधि के लाय।
सो तुझको क्षण एक में, दगा देय खिर जाय ॥७॥
लक्ष्मी साथ न अनुसरे, देह चले नहिं संग।
काढ काढ सुजनहि कहे, देख जगत के रंग ॥८॥
दुर्लभ दश द्रष्टांत सम, सो नरभव तुम पाय।
विषय सुखन के कारने, चले सर्वस्व गुमाय ॥९॥
जगहि फिरत कइ युग भये, सो कछु कियो विचार।

चेतन चेतो अब तुम्हें, लहि नरभव अहिसार ॥१०॥
ऐसे मति विभ्रम भई, लगी विषय की धाय।
कै दिन कै छिन कै घड़ी, यह सुख थिर ठहराय ॥११॥
पीतो सुधा स्वभाव की, जी ! तो कहूं सुनाय।
तू रीतो क्यों जात है, नरभव बीतो जाय ॥१२॥
मिथ्यादृष्टि निकृष्ट अति, लखैन इष्ट अनिष्ट।
भ्रष्ट करत है सिष्ट को, शुद्ध दृष्टि दे पिष्ट ॥१३॥
चेतन कर्म उपाधि तज, राग द्वेष को संग।
ज्यों प्रगटे परमातमा, शिव सुख होय अभंग ॥१४॥
ब्रह्म कहूं तो मैं नहीं, क्षत्री भी मैं नाहिं।
वैश्य शुद्र दोनों नहीं, चिदानंद हूं मांहि ॥१५॥
जो देखें इन नयन से, सो सब बिणस्यो जाय।
उनको जो अपना कहे, सो मूरख शिरराय ॥१६॥
पुद्गल को जो रूप है, उपजे बिणसे सोय।
जो अविनाशी आतमा, सो कछु और न होय ॥१७॥
देख अवस्था गर्भ की, कौन कौन दुःख होहि।
बहुर मगन संसार में, सो लानत है तोहि ॥१८॥
अधो शीश ऊरध चरन, कौन अशुचि आहार।
थोड़े दिन की बात यह, भूलि जात संसार ॥१९॥
अस्थि चर्म मल मूत्र में, रात दिनों को वास।
देखें दृष्टि घिनावनो, तऊ न होय उदास ॥२०॥

रोगादिक पीडित रहै, महा कष्ट जो होय।
तब हू मूरख जीव यह, धर्म न चिन्तै कोय ॥२१॥
मरन समय विललात है, कोई न लेय बचाय।
जाने ज्यों त्यों जीजिये, जोर न कछु बसाय ॥२२॥
फिर नरभव मिलिबो नहीं, किये हु कोटि उपाय।
ताते वेगहि चेत हू, अहो जगत के राय ॥२३॥
भैया की यह वीनती, चेतन चितहि विचार।
ज्ञान दर्श चारित्र में, आपो लेहु निहार ॥२४॥

प्रश्नोत्तर ।

देव श्री अरिहन्त निरागी, दयामूल सुचि धर्म सोभागी ।
हित उपदेश गुरु सुसाधु, जे धारत गुण अगम अगाधु ॥१॥
उदासीनता सुख जग मांही, जन्म मरण सम दुःख कोई नाहीं ।
आत्मबोध ज्ञान हितकार, प्रवल अज्ञान भ्रमण संसार ॥२॥
चित्त निरोध ते उत्तम ध्यान, ध्येय वीतरागी भगवान ।
ध्याता तास मुमुक्षु बखान, जे जिनमत तत्वारथ जान ॥३॥
लहि भव्यता म्होटो मान, केवल अभव्य त्रिभुवन अपमान ।
चेतन लक्षण कहिये जीव, रहित चेतन जान अजीव ॥४॥
पर उपकार पुण्य करी जाण, पर पीड़ा ते पाप बखाण ।
आश्रव कर्म आगमन धारे, संवर तास विरोध विचारे ॥५॥
निर्मल हंस अंश जिहां होय, निर्जरा द्वादश विधि तप जोय ।
कर्म मल बंधन दुख रूप, बंध अभाव ते मोक्ष अनूप ॥६॥
पर परणति ममतादिक हेय, स्व पर भाव ज्ञान कर ज्ञेय ।
उपादेय आत्मगुण वृंद, जाणो भविक महासुख कंद ॥७॥
परम बोध मिथ्या दृग रोध, मिथ्या दृग दुःख हेत अबोध ।
आत्म हित चिंता सुविवेक, तास विमुख जड़ता अविवेक ॥८॥
परभव साधक चतुर कहावे, मूरख जेते बन्ध बढ़ावे ।
त्यागी अचल राज पद पावे, जे लोभी ते रंक कहावे ॥९॥
उत्तम गुण रागी गुणवन्त, जे नर लहत भवोदधि अन्त ।
जोगी जश ममता नहीं रती, मन इन्द्रिय जीते ते जती ॥१०॥
समता रस साहर सो सन्त, तजत मानते पुरुष महंत ।
शूर वीर जे कंद्रप वारे, कायर काम आणा शिर धारे ॥११॥

अविवेकी नर पशु समान, मानव जस घट आतम ज्ञान।
दिव्य दृष्टि धारी जिन देव, करता तास इन्द्रादिक सेव ॥१२॥
ब्राह्मण जे ते ब्रह्म पिछाणे, क्षत्रि कर्म रिपु वश आणे।
वैश्य हानि वृद्धि जे लखे, शुद्र भक्ष अभक्ष जे भखे ॥१३॥
अथिर रूप जाणो संसार, थिर एक जिन धर्म हितकार।
इन्द्रि सुख छिल्लर जल जानो, श्रमन अनिन्द्री अगाध बखानो ॥१४॥
इच्छा रोधन तप मनोहार, जय उत्तम जग में नवकार।
संजम आतम थिरता भाव, भव सागर तरवा को नाव ॥१५॥
छती शक्ति गोपवे ते चोर, शिव साधक ते साध किशोर।
अति दुर्जय मन की गति जोय, अधिक कपट पापी में होय ॥१६॥
नीच सोई पर द्रोह विचारे, ऊँच पुरुष पर विकथा निवारे।
उत्तम कनक कीच सम जाणे, हरख शोक हृदये नहिं आणे ॥१७॥
अति प्रचंड अग्नि है क्रोध, दुरदम मान मातंग गज जोध।
विष वेली माया जग माहीं, लोभ समो साह्यर कोई नाहीं ॥१८॥
नीच संगति से डरिये भाई, मलिये सदा संतकूँ जाई।
साधु संग गुण वृद्धि थाय, पापी की संगते पत जाय ॥१९॥
चपला जेम चंचल नर आयु, खिरत पान जब लागे वायु।
छिल्लर अंजली जल जेम छीजे, इण विध जाणिम मत
कहा कीजे ॥२०॥
चपला तिम चंचल धन धान, अचल एक जग में प्रभु नाम।
धर्म एक त्रिभुवन में सार, तन, धन, यौवन सकल असार ॥२१॥
नरक द्वार विषय नित जाणो, ते थी राग हिये नवि आणो।
अन्तर लक्ष रहित ते अंध, जानत नहीं मोक्ष अरुबन्ध ॥२२॥
जे नवि सुणत सिद्धान्त बखान, बधिर पुरुष जग में ते जान।

अवसर उचित बोलि नवि जाणे, ताकुँ ज्ञानी मूक बखाणे ॥२३॥
सकल जगत जननी है दया, करत सहु प्राणि की मया।
पालण करत पिता ते कहिये, ते तो धर्म चित्त सद्दहिए ॥२४॥
मोह समान रिपु नहीं कोई, देखो सहु अन्तरगत हो जोई।
सुख में मित्र सकल संसार, दुःख में धर्म एक आधार ॥२५॥
डरत पाप थी पंडित सोई, हिंसा करत मूढ सो होई।
सुखिया सन्तोषी जग मांही, जाकुँ त्रिविध कामना नाहीं ॥२६॥
जाकुँ तृष्णा अगम अपार, ते म्होटा दुखिया तनुधार।
थया पुरुष जे विषयातीत, ते जग मांहे परम अभीत ॥२७॥
मरण समान भय नहीं कोई, चिंता सम जरा नवि होई।
प्रबल वेदना क्षुधा बखानो, वक्र तुरंग इन्द्रि मन जानो ॥२८॥
कल्पवृक्ष संजम सुखकार, अनुभव चिंतामणी विचार।
काम गवी वर विद्या जाण, चित्रावेलि भक्ति चित्त आण ॥२९॥
संजम साध्यां सवि दुःख जावे, दुःख सहु गयां मोक्ष पद पावे।
श्रवण शोभ सुणिये जिनवाणी, निर्मल जिम गंगा जल पाणी ॥३०॥
करकी शोभा दान बखाणो, उत्तम भेद पंचतस जाणो।
भुजा बले तरिए संसार, इण विध भुजा शोभ चित धार ॥३१॥

(ब्रह्मविलास) उपदेश-पच्चीसी

वसत निगोद काल बहु गये, चेतन सावधान नहीं भये।
दिन दस निकस वहु फिर पड़ना, एते पर एता क्या करना ॥१॥
अनंत जीव की एक ही काया, उपजन मरन एकत्र कहाया,
स्वास उसांस अठारह मरना, एते० ॥२॥ अक्षर भाग अनंतम कह्यो, चेतन ज्ञान इहां लो रह्यो। कौन शक्ति कर तहां निकरना,

ऐतें० ॥३॥ पृथ्वी अप तेउ अरु वाय, वनसपति में वसै सुभाय। ऐसी गति में दुख बहु भरना ऐतें० ॥४॥ केतो काल इहां तोहि गयो, निकसी फेर विकल त्रय भयो । ताका दुःख कछु जाय न वरना, ऐतें० ॥५॥ पशु पत्ती की काया पाई, चेतन रहे वहां लपटाई । विना विवेक कहो क्यों तरना, ऐतें० ॥६॥ इम तिरजंच मांहीं दुख सहे, सो दुःख किनहु जाहि न कहे । पाप करम ते इह गति परना, ऐतें० ॥७॥ फिरहु परके नरक के मांहि, सो दुःख कैसे वरनो जाहिं । द्येत्र गंध तो नाक जु सरना० ऐतें० ॥८॥ अग्नि समान भूमि जहं कही, कितहु शीत महावन रही । सूरी सेज छिनक नहीं टरना० ऐतें० ॥९॥ परम अधर्मि देव कुमारा, छेदन भेदन करहिं अपारा । तिनके बसते नाहिं उबरना० ऐतें० ॥१०॥ रंचक सुख जहां जीव को नाहिं, वसत याहि गति नाहिं अवाहि । देखत दुष्ट महाभय डरना० ऐतें० ॥११॥ पुण्य योग भयो सुर अवतारा, फिरत फिरत इह जगत मझारा, आवत काल देख थर हरना० ऐतें० ॥१२॥ सुर मंदिर अरु सुख संयोगा, निश दिन सुख संपति के भोगा, छिन इक मांहि तहां ते टरना० ऐतें० ॥१३॥ बहु जन्मांतर पुण्य कमाया, तव कहुँ लही मनुष परजाया, तामें लग्यो जरा गद मरना, ऐतें० ॥१४॥ धन जोबन सब ही ठकुराइ, कर्म योग ते नौ निधि पाइ, सो स्वप्नान्तर कासा वरना, ऐतें० ॥१५॥ निश दिन विषय भोग लपटाना, समुझे नहिं कौन गति जाना । हैं छिन काल आयु को चरना, ऐतें० ॥१६॥ इन विषयन के तो दुःख दीनो, तव हुँ तू तेही रसभीनो, नेक विवेक हृदे नहिं धरना, ऐतें० ॥१७॥ पर संगति के तो दुःख पावे; तवहु ताको लाज न आवे, नीर संग वासन ज्यों जरना, ऐतें० ॥१८॥

देव गुरु धर्म ग्रंथ न जाने, स्व-पर विवेक हृदे नहिं आने । क्यों होवे भव सागर तरना, ऐते० ॥१९॥ पाचों इन्द्रि अति बटमारे, परस धर्मधन मूसन हारे,खांहि पियहि ऐतो दुख भरना ऐते०॥२० सिद्ध समान न जाने आपा, ताते तोहि लगत है पापा, खोल देख झट पटहि उधरना, ऐते० ॥ २१ ॥ श्री जिन वचन अमल रस बानी, पीवहि क्यों नहिं मूढ़ अज्ञानी, जातै जन्म जरा मृत हरना,ऐते० ॥२२॥ जो चेते तो है यह दावो,नाहीं बैठे मंगल गावो फिर यह वृक्ष नरभव न फरना । ऐते० ॥२३॥ भैया विनवहि वारंबारा, चेतन चेत भलो अवतारा, है दुलह शिव नारी वरना ।

दोहा—ज्ञानमयी दर्शनमयी, चारितमयी स्वभाव ।
सो परमातम ध्याइये, यहै सुमोक्ष उपाय ॥ २५ ॥

इन्द्रिय दमन

दोहा—इन्द्रिन की संगति किये, जीव परे जग माँहि । जन्म मरण बहु दुख सहे, कवहु छूटे नाहिं॥१॥ भौंरो पर्यो रसनाक के, कमल मुदित भये रैन । केतकी कांटन बाँधियो, कवहु न पायो चैन ॥२॥ कानन की संगति किये, मृग मार्यो वन मांहि । अहि पकर्यो रस कान के, किमहू छुट्यो नाहिं ॥ ३ ॥ आँखनि रूप निहार के, दीप परत है धाय । देखहु प्रगट पतंग की, खोवत अपनो काय ॥४॥ रसना वस मच्छ मारियो, दुर्जन करे विसवास । यातै जगत विगुचीयो, सहे नरक दुःखवास ॥५॥ फरस हिते गज वश पर्यो, वंध्यां सांकल तान । भूख प्यास सव दुख सहे, किहिं विधि कहहिं वखाण ॥६॥ पंचेन्द्रिय की प्रीति सों, जीव सहे दुख घोर । काल अनन्त ही जग फिरे, कहुँ न पावे ठोर ॥७॥ मन

राजा कहिये बड़ो, इन्द्रिन को सरदार। आठ पहर प्रेरत रहे, उपजे कई विकार ॥८॥ मन इन्द्रि संगति किये, जीव परे जग जोय। विषयन की इच्छा वढ़े, कैसे शिवपुर होय ॥ ९ ॥ इन्द्रिन ते मन मारिये, जोरिये आतम मांहि। तोरिये नातो राग सों, फोरिये बलसों यांहि ॥ १० ॥ इन्द्रिन नेह निवारिये, टारिये क्रोध कषाय। धारिये संपति शास्वती, तारिये त्रिभुवन राय ॥११॥ गुण अनन्त जामें लसे, केवल दर्शन आदि। केवल ज्ञान विराजतो, चेतन चिन्ह अनादि ॥ १२ ॥ थिरता काल अनादि लों, राजे जिहँ पद मांहिं। सुख अनन्त स्वामी वहे, दूजो कोउ नाहिं ॥१३॥ शक्ति अनन्त विराजती, दोष न जानहि कोय। समकित गुण कर शोभतो, चेतन लखिये सोय ॥ १४ ॥ वधे घटे कवहु नहिं, अविनाशी अविकार। भिन्न रहे पर द्रव्य सों, सोचे तन निरधार॥१५ पंच वर्ण में जो नहीं, नहीं पंच रस मांहि। आठ फरस ते भिन्न है गंध दोउ कोउ नाहिं ॥ १६ ॥ जानत जो गुण द्रव्य के, उपजन विनसन काल। सो अविनाशी आतमा, चिन्हु चिन्ह दयाल ॥ १७ ॥

परमात्म पद के दोहे

सकल देव में देव यह, सकल सिद्ध में सिद्ध। सकल साधु में साधु यह, पेख निजातम रिद्ध ॥ १ ॥ फिरे वहुत संसार में, फिर फिर थाके नाहि। फिरे जबहि निज रूप को, फिरे न चहु गति मांहि ॥ २ ॥ हरी खात हों बावरे, हरी तारि मति कौन। हरी भजो आपो तजो, हरी रीती सुख हौन ॥ ३ ॥ परमारथ परमे नहिं, परमारथ निज भ्यास। परमारथ परिचय विना, प्राणी

रहे उदास ॥४॥ आप पराये वश परे, आपा डार्यो खोय । आप आप जाने नहीं आप प्रकट क्यों होय ॥५॥ दिनाँ दश के कारणे सब सुख डार्यो खोय । विकल भयो संसार में, ताहि मुक्ति क्यों होय ॥६॥ निज चन्दा की चांदनी, जिही घट में परकाश। तिहि घट में उद्योत हो, होय तिमिर को नाश ॥७॥ जित देखत तित चांदनी, जब निज नैनन जोत । नैन मिचत पेखे नहीं, कौन चांदनी होत ॥८॥ जे तन सो दुःख होत है, यहै अचंभो मोहिं, ते तन सो ममता धरे, चेतन चेत न तोहि ॥ ९ ॥ जा तन सो तूं निज कहे, सो तन तो तुझ नाहिं । ज्ञान प्राण संयुक्त जो, सो तन तो तुझ मांहि ॥ १० ॥ जाकी प्रीत प्रभाव सों, जीत न कबहुँ होय । ताकी महिमा जे धरे, दुरबुद्धि जिय सोय ॥ ११ ॥ अपनी नव निधि छोड़के, मांगत घर घर भीख । जान बूझ कुए परे, ताहि कहो कहा सीख ॥ १२ ॥ मूढ मगन मिथ्यात्व में, समुझे नाहिं निठोल । कानी कोड़ी कारणे, खोवे रतन अमोल ॥ १३ ॥ कानी कौडी विषय सुख, नर भव रतन अमोल । पुख पुन्य हि कर चढ्यो, भेद न लहे निठोल ॥ १४ ॥ चौरासी लख में फिरे, राग द्वेष परसंग । तिन सो प्रीति न कीजिये, यहै ज्ञान को अंग ॥१५॥ चल चेतन तहां जाइये, जहां न राग विरोध । निज स्वभाव परकाशिये, कीजे आतमबोध ॥ १६ ॥ तेरे बाग सुज्ञान है, निज गुण फूल विशाल । ताहि त्रिलोकहुं परम तुम, छांडि आल जंजाल ॥ १७ ॥ जित देखेहु तित देखिये, पुद्गल ही सों प्रीत । पुदगल हारे हार अरु, पुदगल जीते जीत ॥ १८ ॥ जगत फिरत कै जुग भये, सो कछु कियो विचार । चेतन अब किन चेतहु, नर भव लह अतिसार ॥ १९ ॥ दुर्लभ दस दृष्टान्त सो, सो नर भव तुम

पाय । विषय सुखन के कारणे, सर्वस चलो गँवाय ॥ २० ॥ ऐसी मति विभ्रम भई, विषयन लागत धाय । कै दिन कै छिन कै घरी, यह सुख थिर ठहराय ॥ २१ ॥ करमन सो कर युद्ध तू, करले ज्ञान कमान । तान स्वबल सो परम तू, मारो मनमथ जान ॥२२॥ तुमतो पद्म समान हो, सदा अलिप्त स्वभाव । लिप्त भयो गोरस (इंद्रि) विषे, ताको कौन उपाव ॥ २१ ॥ अपने रूप स्वरूप सों, जो जिय राखे प्रेम । सो निहचे शिव पद लहे, मनसा वाचा नेम ॥ २४ ॥ ध्यान धरो निज रूप को, ज्ञान मांहि उर आन । तुम तो राजा जगत के, चेतहु विनती मान ॥ २५ ॥

अथ ज्ञानपच्चीसी (श्री बनारसीदासजी कृत) ।

सुरनर तीर्यग योनि में, नरक निगोद भवंत । महा मोह की नींद सों, सोये काल अनन्त ॥ १ ॥ जैसे ज्वर के जोरसों, भोजन की रुचि जाय । तैसे कुकर्म के उदय, धर्म वचन न सुहाय ॥ २ ॥ लगै भूख ज्वर के गयै, रुचि सों लेय आहार । अशुभ गये शुभ के जगे, जाने धर्म विचार ॥ ३ ॥ जैसे पवन झकोरतें, जल में उठै तरंग । त्यों मनसा चंचल भई, परिग्रह के परसंग ॥ ४ ॥ जहां पवन नहीं संचरै, तहां न जल कलोल । त्यों सब परिग्रह त्याग लों, मनसा होय अडोल ॥ ५ ॥ ज्यों काहू विषधर डसै, रुचि सो नीम चबाय । त्यों तुम ममता सों मढे, मगन विषय सुख पाय ॥ ६ ॥ नीम रस भावे नहीं, निर्विष तन जब होय । मोह घटे ममता मिटै, विषय न वांछै कोय ॥ ७ ॥ जो सछिद्र नौका चढ़े, डूबइ अंध अदेख । त्यों तुम भव जल में परे, विन विवेक धर भेख ॥ ८ ॥ जहां अखंडित गुण लगे, खेवट शुद्ध विचार । आतम रुचि नौका

चढ़ै, पावहु भव जल पार ॥ ९ ॥ ज्यों अंकुश मानै नहीं, महा मत्त गजराज । त्यौं मन तृष्णा में फिरै, गणै न काज अकाज ॥१०॥ ज्यों नर दाव उपाव कैं, गही आने गज साधि । त्यों या मन वश करन को, निर्मल ध्यान समाधि ॥ ११ ॥ [1]तिमिर रोगसों नैन ज्यों, लखै और की और । त्यों तुम संशय में परे, मिथ्यामत को दौर ॥ १२ ॥ ज्यों औषध अंजन किये, तिमिर रोग मिट जाय । त्यौं सद्गुरु उपदेश तें, संशय वेग [2]विलाय ॥ १३ ॥ जैसे सब जादव जरे, द्वारावती की आग । त्यों माया में तुम परे, कहां जाहुगे भाग ॥ १४ ॥ दीपायनसों ते बचे, जे तपसी निर्ग्रंथ । तज माया समता गहो, यही मुक्ति को पंथ ॥ १५ ॥ ज्यों कुधातु के फेट सों, घट बध कंचन कांति । पाप पुण्यकरी त्यों भये, मूढातम बहु भांति ॥ १६ ॥ कंचन निज गुण नहिं तजे, [3]वान हीन के होत । घट घट अंतर आतमा, सहज स्वभाव उद्योत ॥ १७ ॥ पन्ना पीट पकाइये, शुद्ध कनक ज्यों होय । त्यों प्रगटे परमातमा, पुण्य पाप मल खोय ॥ १८ ॥ पर्व राहु के ग्रहण सों, [4]सूर [5]सोम [6]छवि छीन । संगति पाय कुसाधु की, सज्जन होय मलीन ॥१९॥ निंबादिक चन्दन करै, मलियाचल की बास । दुर्जन तैं सज्जन भये, रह सुसाधु के पास ॥ २० ॥ जैसे [7]ताल सदा भरे, जल आवे चहुं ओर । तैसे आश्रव द्वारसों, कर्म बंध को जोर ॥ २१ ॥ ज्यों जल आवत [8]मूंदिये, सूके सरवर पानी । तैसे संवर के किये, कर्म

१—तिमिर = आंख में अंधेरी आना । २—विलाय = नाश होवे ।

३—वान = वर्ण । ४—सूर = सूरज । ५—सोम = चन्द्र । ६—छवी = प्रकाश । ७—ताल = तलाव । ८—मूंदीये = बन्ध करे । रोके ।

निर्जरा जानी ॥ २२ ॥ ज्यों बूटी संयोग तैं, पारा मूर्छित होय। त्यों पुद्गल सों तुम मिले, आतम सकती खोय ॥ २३ ॥ मेल खटाइ मांजिये, पारा परगट रूप। शुक्ल ध्यान अभ्यास तें, दर्शन ज्ञान अनूप ॥ २४ ॥ कही उपदेश बनारसी, चेतन अब कछु चेतु, आप बुझावत आपको, उदय करन के हेतु ॥ २५ ॥

इति श्री ज्ञानपच्चीसी सम्पूर्णम् ॥

पंच परमेष्ठि की स्तुति तथा ध्यानादि श्री द्रव्य संग्रह छंद

चौपाई

चार घातिया कर्म निवारी। ग्यान दरस सुख बल परकाश ॥
परमौदारिक तनु गुणवंत। ध्याऊँ शुद्ध सदा अरहंत ॥१॥
करम काय नासै सब थोक। देखै जानैं लोकालोक ॥
लोक शिखर थिर पुरुषाकार। ध्याऊँ सिद्ध सुखी अविकार ॥२॥
दरशन ग्यान प्रधान विचार। व्रत तप वीरज पंचाचार ॥
धरैं धरावैं और निपास। ध्याऊँ आचारज सुख रास ॥३॥
सम्यक् रत्न त्रय गुण लीन। सदा धरम उपदेश प्रवीन ॥
साधुनी मैं मुख करुनाधार। ध्याऊँ उपाध्याय हितकार ॥४॥
दर्शन ज्ञान सुगुण भंडार। परम मुनिवर मुद्राधार ॥
साधे शिव मारग आचार। ध्याऊँ साधु सुगुण दातार ॥५॥
तन चेष्टा तजी आसन मांडी। मौनधारी चिंता सब छांडी ॥
थीर ह्वै मगन आप में आप। यह उत्कृष्ट ध्यान निहपाप ॥६॥
जब लौं मुगति चहैं मुनिराज। तब लौं नहीं पावे शिवराज ॥
सब चिंता तज एक स्वरूप। सोई निहचै ध्यान अनूप ॥७॥

दोहा—खाना चलना सोवना, मिलना वचन विलास ।
ज्यों ज्यों पंच घटाइये, त्यों त्यों ध्यान प्रकाश ॥ ८ ॥

चौपाई

सम्यक् रत्न त्रय जियमांहीं । निज तजी और दर्व में नाहीं ॥
तातै तीनों, में निहपाप । शिव कारण यह चेतन आप ॥९॥

(दोहा) आप आप में आपको, देखे दरशन जोय ।
जान पना सो ज्ञान है, थिरता चारित्रसोय ॥१०॥
अशुभ भाव निवार के, शुभ उपयोग विसतार ।
सुमिति गुपति व्रत भेदसों, सो चारित व्यवहार ॥११॥

चौपाई

बाहिर परिणति चंचल जोग । अन्तर भाव समल उपयोग ॥
दोनों कियैं बढै संसार । रोकैं निहचै चारित सार ॥१२॥
चारित निहचै अरु व्यवहार । उभय मुक्ति कारन निरधार ॥
होंही ध्यान तैं दोनों रास । कीजे ध्यान जतन अभ्यास ॥१३॥

राग निवारण अंग

अरे जीव भव बन विषै, तेरा कौन सहाय ।
जिनके कारण पचि रह्या, तेतो तेरे नाय ॥१॥
संसारी को देखिले, सुखी न एक लगार ।
अब तो पीछा छोड़िदे, मत धर सिर पे भार ॥२॥
झूठे जग के कारणे, तू मत कर्म बँधाय ।
तू तो रीता ही रहै, धन पैला ही खाय ॥३॥

तन, धन संपति पाय के, मगन न हो मन मांय।
कैसे सुखिया होयगा, सोवे लाय लगाय ॥४॥
ठाठ देख भूले मति, ए पुद्गल पर याय।
देखत देखत थांहरै, जासी थिर न रहाय ॥५॥
लूटेंगें ज्ञानादि धन, ठग सम यह संसार।
मीठे वचन उचारि के, मोहफाँसी गल डार ॥६॥
मोह भूत तोकौं लग्यो, करे न तनक विचार।
ना माने तो परखिले, मतलब को संसार ॥७॥
काया ऊपर थांहरे, सब सूं अधिकी प्रीत।
या तो पहले सबन में, देगी दगो नचीत ॥८॥
विषय दुखन को सुख गिनै, कहूँ कहाँ लगि भूल।
आँख छता आँधा हुआ, जाणपणा में धूल ॥९॥
नित प्रति दीखत ही रहे, उदै अस्त गति भान।
अजहुँ न ज्ञान भयो कछु, तू तो बड़ो अजाण ॥१०॥
किसके कहे निश्चिंत तू, सिर पर फिरे जु काल।
बांधे है तो बांध ले, पानी पहिले पाल ॥११॥
आया सो सब ही गया, अवतारादि विशेष।
तू भी यों ही जायगा, इण में मीन न मेख ॥१२॥
यो अवसर फिर ना मिलै, अपनो मतलब सार।
चुकते दाम चुकाय दे, अब मत राख उधार ॥१३॥
कैसे गाफिल हो रहा, निवड़ा आत करार।
निपजी खेती देख क्यों, बाटी सटे गँवार ॥१४॥
धर्म विहार कियो नहीं, कीनो विषय विहार।
गांठ खाय रीते चले, आके जग हटवार ॥१५॥

काज करत पर घरन के, अपना काज बिगार ।
सीत निवारे जगत की, अपनी झुंपरी बार ॥१६॥
नहिं विचार तैंने किया, करना था क्या काज ।
उदै होयगा कर्म फल, तब उपजेगी लाज ॥१७॥
झूठे संसारीन की, छूटेगी जब लाज ।
इनसों अलगा होयगा, तब सुधरेगा काज ॥१८॥
अपनी पूँजी सू करौ, निश्चल कार बिहार ।
बांध्या सो ही भोग ले, मति कर और उधार ॥१९॥
नया कर्म ऋण काढ़ि के, करसी कार बिहार ।
देणा पड़सी पार का, किम होसी छुटकार ॥२०॥
विषय भाग किंपाक सम, लखि दुख फल परिणाम ।
जब विरक्त तू होयगा, तब सुधरेगा काम ॥२१॥
येरे मन मेरे पथिक, तू न जाव वहँ ठोर ।
बटमारा पाँचू जहाँ, करैं साह कूं चोर ॥२२॥
आरंभ विषय कषाय कूं, कीनी बहुत हि वार ।
कछु कारज सरिया नहीं, उलटा हुआ खुवार ॥२३॥
चारूँ सँज्ञा में सदा, सुतै निपुन चित लाग ।
गुरु समझावे कठिन सूँ, उपजै तउ न विराग ॥२४॥
खैर हुआ जो कुछ हुआ, अब करनो नहिं जोग ।
बिना विचारे तैं किया, ताको ही फल भोग ॥२५॥

मेरी भावना

(जीवन सुधार नित्य पाठ)

जिसने रागद्वेषकामादिक जीते, सब जग जान लिया,
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का, निस्प्रह हो उपदेश दिया।
बुद्ध, वीर, जिन, हरि, हर ब्रह्मा; या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति-भाव से प्रेरित हो यह, चित्त उसी में लीन रहो ॥१॥
विषयों की आशा नहिं जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं,
निज-परके हित-साधनमें जो, निशदिन तत्पर रहते हैं।
स्वार्थत्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुख समूह को हरते हैं ॥२॥
रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे,
उन ही जैसी चर्या में यह चित्त सदा अनुरक्त रहे।
नहीं सताऊँ किसी जीव को, झूठ कभी नहिं कहा करूँ,
पर धन-वनित * पर न लुभाऊँ, संतोषामृत पिया करूँ ॥३॥
अहंकार का भाव न रक्खूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूँ,
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्षा भाव धरूँ।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल सत्य व्यवहार करूं,
बने जहां तक इस जीवन में औरों का उपकार करूं ॥४॥
मैत्रीभाव जगत में मेरा सब जीवों से नित्य रहे,
दीन दुःखी जीवों पर मेरे उर से करुणा स्रोत बहे।
दुर्जन-क्रूर-कुमार्गरतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवे,
साम्यभाव रक्खूँ मैं उन पर ऐसी परिणति हो जावे ॥५॥

---

*स्त्रियां—"वनिता" की जगह 'भर्ता' पढ़े।

गुणीजनों को देख हृदय में, मेरे प्रेम उमड आवे,
बने जहाँ तक उनकी सेवा, करके मन यह सुख पावे।
होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण-ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ॥६॥
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,
लाखों वर्षों तक जीऊँ या, मृत्यु आज ही आ जावे।
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे,
तो भी न्यायमार्ग से मेरा कभी न पद डिगने पावे ॥७॥
होकर सुख में मग्न न फूले, दुख में कभी न घबरावे,
पर्वत-नदी-श्मशान-भयानक अटवी से नहिं भय खावे।
रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन दृढ़तर बन जावे,
इष्टवियोग-अनिष्टयोगमें, सहनशीलता दिखलावे ॥८॥
सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे,
वैर-पाप-अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मंगल गावे।
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावें,
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्म फल सब पावें ॥९॥
ईति-भीति व्यापे नहिं जग में, वृष्टिसमय पर हुआ करे,
धर्मनिष्ट होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे।
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शान्ति से जिया करे,
परम अहिंसा-धर्म जगत में, फैल सर्व हित किया करे ॥१०॥
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे,
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करे।
बनकर सब 'युग-वीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करें,
वस्तुस्वरूप विचार खुशी से, सब दुख संकट सहा करें ॥११॥

व्याख्यान के प्रारम्भ की स्तुति

वीर हिमाचल से निकसी, गुरु गौतम के श्रुत कुराड ढरी है ।
मोह महाचल भेद चली, जगकी जड़ता सब दूर करी है ॥ १ ॥
ज्ञान पयोदधि माँथ रली, बहु भंग तरंगन सें उछरी है ।
ता सूची सारद गङ्गनदी, प्रणमी अंजली निज सीस धरी है ॥ २ ॥
ज्ञानसुं नीर भरी सलिला, सुरधेनु प्रमोद सुखीर निध्यानी ।
कर्म जो व्याधी हरन्त सुधा, अघमेल हरन्त शीवा कर मानी ॥ ३ ॥
जैन सिद्धान्त की ज्योति वढ़ी, सुरदेव स्वरूप महा सुखदानी ।
लोक त्रलोक प्रकाश भयो, मुनिराज बखानत है निज बानी ॥ ४ ॥
सोभित देव विषे मघवा, अरु वृन्द विषे शशी मंगलकारी ।
भूप समूह विषे वली चक्र, प्रति प्रगटे बल केशव भारी ॥ ५ ॥
नागीन में धरणीन्द्र वड़ो, अरु है असुरीन में चवनेन्द्र अवतारी ।
ज्युँ जिन शासन संघ विषे, मुनिराज दीये श्रुत ज्ञान भण्डारी ॥ ६ ॥

कैसे कर कैतकी कणेर एक कहियो जाय, आक दूध माय दूध अन्तर घणेरो है ।
रिरी होत पीली पिण होंस करे कंचन की, कहाँ काग वानी कहाँ कोयल की टैरा है ॥
कहाँ भानु तेज भयो आगियो विचारो कहाँ,
पूनमको उजवालो कहाँ अमावस अँधेरो है ।
पक्ष छोड़ पारखी निहाल देख मिगाकर, जैन वैन और वैन अंतर घणेरो है ॥
वीतराग वानीं साची मोक्ष की निशानी जानीं,
महा सुकृत की खानी ज्ञानी आप मुख वखाणी है ।
इनको आराधके तिरिया है अनन्त जीव, सोही निहाल जाण सरवा मन आणी है ॥
सरधा है सार धार सरधासे खेवो पार, सरधा बिन जीव खुवार निश्चय कर मानी है
वाणी तो घणोरी पण वीतराग तुल्ये नहिं, इनके सिवाय और छोरा सी कहानी है

॥ ॐ ॥

* वन्देवीरम् *

मरुस्थल में गौ-रक्षा

लेखक—

रत्नलाल महता

संचालक—

श्री जैन शिक्षण संस्था, उदयपुर (मेवाड़)

प्रकाशक—

श्री जैन उत्तम साहित्य प्रकाशक मंडल,
उदयपुर (मेवाड़).

मुद्रक—

दि डायमण्ड जुबिली प्रेस, अजमेर.

प्रथमवार	वीर सम्वत् २४५७	डाकमहसूल
१०००	विक्रम सम्वत् १९८८	

निवेदन

गौरक्षा नाम की छोटीसी पुस्तक को आज पाठकों के समक्ष रखते हुए हमें अत्यन्त हर्ष होता है। हर्ष इसलिये नहीं होता कि मैं अपनी कृति को प्रसिद्ध करता हूं किन्तु इसलिये कि मुझ जैसे क्षुद्र सेवक को गौ सेवा करने का अपूर्व अवसर मिला। यह मैं अपने लिये वड़ा सौभाग्य समझता हूँ, गौ सेवा के लाभ के साथ जो जो बातें मुझे अपने अनुभव से आवश्यक मालूम हुई उनका भी इसमें समावेश कर दिया गया है। आशा है कि पाठक इससें अवश्य लाभ उठावेंगे। गौरक्षा का प्रश्न भारत के लिये महत्त्व-पूर्ण ही नहीं किन्तु बहुत ही आवश्यकीय एवं विचारणीय प्रश्न हैं। भारत के इतिहास से पता लगता है कि जब तक भारतवर्ष गौ धन से धनी था तब तक ही यहां सुख, समृद्धि, शान्ति का साम्राज्य था गौ धन के ह्रास से ही आज यहां इतनी अशान्ति दारिद्रता का साम्राज्य छाया हुआ है। इस पुस्तक को शुद्ध करने में प्रसिद्ध गौ हितैषी पं० गंगाप्रसादजी अग्नि होत्री, कविराज करणीदानजी साहब क्षेमपुर ठाकुर, भारत धर्म के सम्पादक पं० गोविन्द शास्त्रीजी दुगवेकर, पं० विद्वत्वर

त्रिलोकनाथजी शर्मा इन सज्जनों ने इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़कर जो जो त्रुटियां निकाली हैं उनके लिये मैं इन सज्जनों का आभारी हूँ।

अन्त में पाठकों से मेरी यही प्रार्थना है कि गौरक्षा के प्रश्न को यथा शीघ्र अपने घर का प्रश्न बना लेवें। और तन, मन और धन द्वारा इसकी सेवा में उद्यत होजायँ तभी कुछ भारत का कल्याण हो सकता है।

गौ सेवक—

रतनलाल महता.

सम्मतियां

गो सेवत मंगल दिशि दस हूं

जिन गोभक्त सज्जनों के हृदय में गोवंश के लिये पूज्य भाव और भक्ति है वे इस छोटीसी पुस्तक में जब पढ़ेंगे कि श्रीयुत् महता रत्नलालजी ने भगीरथ प्रयत्न कर ६२२६=)॥। एकत्र किये और उनकी सहायता से ३७० गौओं की प्राण रक्षा की तब वे लोग, गोभक्ति गौरवात्, निःसन्देह गद्गद होकर श्रीयुत् महताजी को बहुत धन्यवाद देंगे। और साथ ही उन उदार धनवान गो भक्तों को भी साधुवाद देवेंगे कि जिन्होंने श्री महताजी को इस काम में उदारता पूर्वक आर्थिक सहायता दी है।

भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है। इस देश की कृषि की सफलता गोवंश पर ही अवलम्बित है। कृषि ही समूचे भारत के समस्त वाणिज्य व्यवसाय का मूलाधार है और कृषि का मूलाधार गोवंश है। तात्पर्य्य—गोवंश है तो कृषि है और कृषि है तो भारत का अस्तित्व और उत्कर्ष है। खेद है कि इस पारस्परिक घने सम्बन्ध की ओर वर्तमान दूरदर्शी भारत नेताओं का ध्यान बहुत कम जा रहा है। गो भक्त लोग

गो रक्षा की पुकार जब तब लगाया करते हैं, परन्तु उनका ध्यान गो रक्षा की उस परिपाटि की ओर तनिक भी नहीं जाता जिससे गो वंश की सच्ची रक्षा की जा सकती है और जिसकी सहायता से गो वंश समूचे भारत के लिये उपयोगी और लाभ दायक बनाया जा सकता है। ऋगवेद काल के भारतवासी आर्यों ने गो रक्षा का अनुग्रह इसलिये किया है कि उचित परिपालन से गो वंश प्रसन्न किया जाय। इस बात को वर्तमान गौ भक्त सर्वथा भूल गये हैं। वे केवल धर्म के नाम पर थोथी गोरक्षा को ही गोरक्षा मान कर उसके पीछे रुपया भी खर्च करते हैं और गो वंश के प्राणियों को भी खाते जाते हैं। यह प्रणाली ठीक नहीं है।

अब धनवान गो भक्तों को चाहिये कि वे अपने किसान भाइयों में उस सस्ते गो साहित्य का नित उठ प्रचार किया करें कि जिसकी सहायता से उन्हें गो परिपालन के सब नियम मालूम होते रहें जिनके अनुसार गो परिपालन करने से गो वंश के प्राणियों के लिये चारा दाना की कभी कमी नहीं हो सकती। साथ ही वह इतना लाभदायक हो सकता है कि उसके पालन के लिये बहुत लोग इच्छुक और लालायित हो उठते हैं।

जिन धनवान गो भक्तों ने श्री महताजी को चुरू की गौओं की प्राण रक्षा करने में आर्थिक सहायता दी है वे और अनन्य गो भक्त, आशा है कि मेरे इस निवेदन पर ध्यान देकर भारत की भलाई करने वाली ठोस गो रक्षा का उपाय अब अवश्य करेंगे। ठोस गो रक्षा का एकमात्र उपाय गोपालन की शिक्षा का प्रचार ही है।

३-६-१६३१ ई. } गंगाप्रसाद अग्निहोत्री,
जबलपुर।

(२)

संसार में एक भारतवर्ष ही ऐसा देश है जो केवल कृषि पर अवलम्बित है, और कृषि की मूल आधार स्वरूप गो जाति है। यद्यपि पाश्चात्यों द्वारा आविष्कृत यन्त्रों से पृथ्वी के कई भूभागों में कृषि कार्य चलाया जाता है परन्तु धरती को उवर्रा बनाये रखने के लिये जो उत्तम खाद होती है उसके लिये उन्हें भी गो वंश पर अवलम्बित रहना पड़ता है। यन्त्रों के साधन भारतवर्ष के लिये उपयुक्त नहीं है। कितने ही कृषि के विशेषज्ञों नें इस पर विचार किया और प्रयोग कर देखे; किन्तु वे इसी निर्णय पर अन्त में पहुंचे कि भारत की कृषि गो जाति की सहायता बिना सफल नहीं हो सकती। उन्होंने परीक्षा करके सिद्ध किया है कि भारत की सब कृषि भूमि छोटे २ टुकड़ों में बटी हुई होने से यन्त्रों द्वारा वह जोती बोई नहीं जा सकती। इसके अतिरिक्त विभिन्न गुण धर्मों की सम्मिश्रित भूमि सर्वत्र रहने से सबका समानरूप से जोतना बोना भी सम्भव नहीं है। गो जाति बिना यहां का कृषि कार्य चल नहीं सकता। अन्ततः भारत की जीवनाधार कृषि के विचार से भी गो रक्षा करना अनिवार्य हो जाता है।

गो पालन से घी, दूध की प्रचुरता का होना और उनसे देशवासियों के सुख स्वास्थ्य का बढना भी स्वाभाविक है।

गोजाति का इस देश में कैसा हाल हो रहा है, और उससे देश की दुर्बलता कैसी बढ रही है, इसको अंकों से पुस्तिका में लेखक ने सिद्ध किया है। धार्मिक विचार से भी गोरक्षा का महत्व कम नहीं है और दया मूलक धर्म में तो गो-रक्षा का प्रथम स्थान है, यह भी लेखक ने प्राचीन श्रावक आनन्दजी, कामदेवजी आदि के उदाहरणों से सिद्ध किया है। इसी को वे ऋद्धि-सिद्धि मानते थे। व्यवहारिक और व्यवसायिक दृष्टि से भी लेखक ने गो-रक्षा का महत्व भली भांति विशद कर दिखाया है। पुराणों में भी महर्षि याज्ञवलक्यादि के गो संग्रह के उदाहरण पाये जाते हैं और न्यूनाधिक गौएँ रखने से नंद, उपनन्द आदि उपाधियां मिलती थीं। बुद्ध और मुसलमानों के शासनकाल तक यहां का गो-वंश समृद्ध था। परन्तु देश के दुर्भाग्य से इधर ५० वर्षों से गौओं का इतना सत्यानाश हुआ है और नित उठ होता जाता है कि न 'भूतो न भवष्यति'। यदि इस समय भी हम न चेते, तो गो-जाति के साथ ही साथ हम भी नाम शेष होजावेंगे, क्योंकि हमारा आधार टूट जाने से हमारा अस्तित्व ही नहीं रह सकता।

उदयपुर के सुप्रसिद्ध गो हितैषी, स्वदेशप्रेमी और उत्साही कार्यकर्ता श्रीमान् महता रत्नलालजी ने इस पुस्तिका को लिखकर देशवासियों की आंखें खोलने का प्रशंसनीय प्रयत्न

किया है। उन्होंने स्वयं अपने उदाहरण से लोगों को दिखा दिया है कि, गो-रक्षा किस प्रकार की जा सकती है? इस पुस्तिका में गो-रक्षा सम्बन्धी प्रायः सब विषय उन्होंने सन्निवेशित कर दिये हैं। हमें आशा है कि, इससे गो-प्रेमी सज्जनों को अवश्य लाभ पहुंचेगा और श्रीमान् महताजी के प्रयत्न सफल होंगे। ईश्वर उन्हें दीर्घायु करें।

गोविन्द शास्त्री—
दुगवेकर,
आनरेरी सेक्रेटरी, श्री भारत धर्म-महा मण्डल, काशी.

(३)

आर्या

एतत्पुस्तक माद्योपान्तं संवीक्षितं मया सम्यक् ।
गो-सेवाया भावः, फलं क्रमश्चेह सर्वतो भाति ॥ १ ॥

अनुष्टुप्

धर्म-प्राणस्वरूपो यः, कोठारीजी महोदयः ।
तत्समुद्योगतो मेद,-पाटेश्वर सहायतः ॥ २ ॥
गो-सङ्कट-प्रतीकारो,-नैष चित्राय धीमताम् ।
यद्दिलीपान्ववायस्य जन्म-सिद्धं गवावनम् ॥ ३ ॥

स्वागता

रतलाल महता-महनीयं, कर्म चित्रयति कस्य न चेतः ?
ब्रह्मचर्य-परिरक्षण-पूर्वं, यः परार्थकृतजीवनदानः ॥ ४ ॥

भावार्थ—मैंने इस पुस्तक को आद्योपान्त अच्छी तरह देखा, गो-सेवा का भाव, फल और तरीका इसमें अच्छे ढंग से बतलाये गये हैं। (वर्तमान समय में) धर्म के प्राणस्वरूप श्रीमान् कोठारीजी श्री बलवंतसिंहजी के उत्तम प्रबन्ध से, मेवाड़-पति श्री ५ मान् महाराणाजी साहब की सहायता पाकर, यदि

गायों का संकट (जैसा कि इस पुस्तक में प्रदर्शित किया जा चुका है) दूर हुआ तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं क्योंकि गायों का पालक (सम्राट) दिलीप की संतान का जन्म-सिद्ध कर्त्तव्य है।

उदयपुर जैन-शिक्षण-संस्था के संचालक इस पुस्तक के लेखक श्रीयुक्त रत्नलालजी महता का तो सराहनीय कर्त्तव्य मात्र, ऐसा कौन मनुष्य होगा जिसे आश्चर्य-चकित नहीं करता हो? जिन्होंने ब्रह्मचर्य-रक्षापूर्वक अपना शेष जीवन ही पराये उपकार में लगा दिया है।

पं० त्रिलोकनाथ मिश्र,

व्या. सा. आचार्य, व्या. का. मी. त. सा. तीर्थ,

मी. क. रत्न, महोपदेशक: विद्याविभूषण।

प्रधान संचालक, मिडिल इंगलिश स्कूल बलुआ,

गोसपुर, पो० प्रतापगंज, भागलपुर, मिथिला.

❀ गाय ❀

दान्तों तले तृण दाब कर, हैं दीन गायें कह रहीं ।
हम पशु तथा तुम हो मनुज, पर योग्य क्या तुमको यही ?
हमने तुम्हें मां की तरह, है दूध पीने को दिया ।
देकर कसाई को हमें, तुमने हमारा वध किया ॥१॥

क्या वश हमारा है भला, हम दीन हैं बलहीन हैं ।
मारो कि पालो कुछ करो तुम, हम सदैव अधीन हैं ॥
प्रभु के यहां से भी कदाचित्, आज हम असहाय हैं ।
इससे अधिक अब क्या कहें, हा हम तुम्हारी गाय हैं ॥२॥

बच्चे हमारे भूख से, रहते समक्ष अधीर हैं ।
करके न उनका सोच कुछ, देती तुम्हें हम छीर हैं ॥
चर कर विपिन में घास, फिर आती तुम्हारे पास हैं ।
होकर बड़े वे वत्स भी, बनते तुम्हारे दास हैं ॥३॥

जारी रहा यदि क्रम यहां, योंहीं हमारे नाश का ।
तो अस्त समझो सूर्य्य, भारत भाग्य के आकाश का ॥
जो तनिक हरियाली रही, वह भी न रहने पाएगी ।
यह स्वर्ण भारत भूमि बस, मरघट मही बन जाएगी ॥४॥

(भारत भारती)

मेरी थली प्रान्त की यात्रा

महान् पवित्रात्मा, गच्छाधिपति पूज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज के दर्शनों के लिये मैं थली (मारवाड़) के ग्राम चुरू (बीकानेर जिले) गया था। पूज्य श्री सचमुच भारत के गौरव स्वरूप हैं। आप संसार के कल्याणकारी हैं। आपके उपदेशों का एक एक शब्द परमोत्तम ज्ञान-सार से भरा रहता है। सारे कष्टों को झेलते हुए आप थली में केवल संसार के कल्याण के लिये पधारे हैं। आपके उपदेशों के फल स्वरूप थली प्रान्त में बहुतसी जीव-हिंसा होने से बची है और बहुत से दया धर्म विमुख मनुष्य दया प्रेमी होगये हैं। मैंने आगे इसी का विस्तृत विवरण किया है। आशा है कि पाठक गण इससे लाभ उठावेंगे।

चुरू में अकाल

चुरू शहर के दयालु धर्मवान् सज्जनों से मिलने पर ज्ञात हुआ कि यहां के एक महाजन ने जोकि दया धर्म की बिलकुल परवाह नहीं करते, चार बछडे कसाई को बेच दिये हैं। और उनको बीकानेर निवासी दयालु धर्मी भैरूदानजी गोलेछा ने

छुड़ा लिया है। इसकी खबर 'अर्जुन' इत्यादि अखबारों में भी निकल चुकी है। दूसरी बात जो मुझे उन्होंने बतलाई, वह यह थी कि यहां पर टीड्डीदल तथा अवर्षा के कारण अकाल का प्रकोप था। घास की कमी के कारण गायें भूखों मर रही थीं, और उनका कोई रक्षक नहीं था। केवल दया धर्मी अग्रवाल, महेश्वरी, ब्राह्मणों और सुनारों वगैरह की ओर से पींजरापोल में गायों की कुछ रक्षा अवश्य होती थी किन्तु वहां पर अधिक गायें रखने तथा उनको घास डालने का सुभीता न था।

इसके अतिरिक्त उन्होंने मुझको यह भी बतलाया कि इस शहर में 'तेरह पन्थी' लक्षाधीक्ष बसते हैं परन्तु **कोठारी** सज्जनों के सिवा सब लोग गायों को घास खिलाने व रक्षा करने में पाप समझते हैं। यद्यपि गच्छाधिपति पूज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब यहां पर विराजते हैं और दयादान का उपदेश फरमाते हैं परन्तु उन लोगों को उनके धर्म गुरू उपदेश सुनने को नहीं आने देते। यदि ऐसे महात्मा के पास यहां के ओसवाल जाकर उपदेश सुनें तो वे भी गो-रक्षा करने लग जांय। परन्तु वे लोग आते ही नहीं है। यहां की गायों को देखते हैं तो बहुतसी तो भूखों मरती है और बहुतसी राज्य क फाटक में बन्द हैं। हम इन जीवों का दुःख जाकर

श्री पूज्यजी से कहते हैं। यदि उनकी कृपा से गायें बच जावे तो हमारा बडा उपकार हो।

ऐसी बातें सुनकर मुझे बडा दुख हुआ। मैं गायों की चिन्ता में पड गया और सोचने लगा कि मुझको क्या करना चाहिये ?

पूज्य श्री की अमृत वाणी

आज भारतवर्ष गरीब हो गया है। पूर्व काल के शास्त्रों में लेख मिलता है कि उस जमाने में जिसके पास जितनी सुनैया (मोहरों) का व्यापार होता था वह अपने पास उतनी ही गायों रखता था। जिन दिनों में भारत के अन्दर गायों का ऐसा मान होता था उन दिनों में यह वैभवशाली बना था। इसमें कौनसी बड़ी बात है ? गाय ऋद्धि-सिद्धि देने वाली मानी गई हैं। जहां ऋद्धि-सिद्धि देने वाली वस्तु हो वहां वैभव की क्या कमी ? उपासक दशांग सूत्र में दश श्रावकों की गायों का वर्णन है।

भाइयों ! अपने शास्त्रों में गायों को बहुत उच्च स्थान दिया गया है। इतना ही नहीं, वेदों और पुराणों में भी इसी प्रकार का उच्च स्थान दिया गया है।

अहिंसा-प्रधान भारतवर्ष में गायों की रक्षा नहीं होती देख कर हमें बडा आश्चर्य और दुःख होता है। यद्यपि यहां के सब धर्मों का मूल अहिंसा ही है। ब्राह्मण लोग गायत्री का जाप गौमुखी के अन्दर हाथ डालकर करते हैं परन्तु इसका मर्म समझने वाले कितने होंगे ?

गौ ऋद्धि-सिद्धि देनेवाली है, इसीसे वैदिक ऋषियों ने भी ऋग्वेद के अन्दर ईश्वर से प्रार्थना की है:—

गौर्मे माता वृषभः पिता मे, दिवा शर्म जगती मे प्रतिष्ठा ।

अर्थात् जिन सात्त्विक भोज्यान्नों और गव्य पदार्थों की सहायता से मैं संसार सुख भोग कर अपने को कल्याण का अधिकारी बनाता हूं—वे गायों और बैलों की सहायता से ही मिल सकते हैं। गौ मेरी मां है और बैल पिता। उन्हीं से मेरी प्रतिष्ठा हो—अर्थात् मुझको बलवान और मेधावी बनने के लिये वे मुझे प्रचुर संख्या में मिलते रहें। क्या श्री कृष्ण महाराज कोई भोले मनुष्य थे ? "नहीं"। उन्होंने गौएँ चराई थीं या नहीं ? "चराई" मित्रो ! इसका मर्म कौन समझेगा ! एक कवि ने तो यहां तक कहा है कि गो-वंश की रक्षा के लिये ही श्री कृष्णजी ने अवतार धारण किया था। हाथ में लकड़ी लेकर श्री कृष्ण का जंगल में जाना, इसमें कितना तत्त्व भरा हुआ है ?

आज गायों की रक्षा के लिये पिंजरा पोलें खोली जाती हैं, परन्तु चन्दा उघा २ कर कहां तक काम चलेगा? गौ-रक्षा का जो उपाय श्री कृष्णजी ने बतलाया वही ऊंडी (मजबूत) जड़ वाला और ठोस उपाय है ऐसा सभी विद्वान् मानते हैं। आज आप पर अज्ञान का राज्य है इसीसे ऋद्धि-सिद्धि देने वाली भी आपको भार रूप मालूम हो रही है।

कई लोग तर्क करते हैं कि किसी जमाने में गौ ऋद्धि-सिद्धि देने वाली रही होगी, परन्तु आजकल के मंहगाई के जमाने में शायद ही हो। इसका उत्तर गौ रक्षा के रहस्य को जानने वाले बन्धु देते हैं और कहते हैं कि जो भाई गो-पालन की इच्छा रखते हैं, वे यदि शान्ति के साथ गौ की आमद खर्च का हिसाब भली भांति लगालें तो उन्हें मालूम हो जावेगा कि आज के जमाने में भी गौ ऋद्धि सिद्धि की दाता है या नहीं? सच बात तो यह है कि आजकल के लोग शास्त्र विहित गौ परिपालन की रीति भूल गये हैं इसी कारण वे दुखी हो रहे हैं। वे हिसाब लगाते हुए कहते हैं कि आज एक अच्छी गाय १००) में आती है। आप इन १००) को गाय के खाते में लिख लीजिये। गाय प्रायः १० महीने दूध दिया करती है। इस समय तक के लिये अधिक से अधिक खर्चा २००) गाय के नाम और लिख लीजिये। कुल ३००) गाय के खाते में गये।

यह तो हुआ खर्च का हिसाब। अब आमदनी का हिसाब लगाइये। दुधारू गाय जिसको कि आपने १००) में खरीदी है अन्दाजन सुबह और शाम आठ सेर दूध देनेवाली होगी। अच्छा दूध बाजार में चार सेर मिलता है। इस हिसाब से दो रुपये रोज से दश महीने में आपको कितनी आमदनी हुई? जोड़िये। ६००) हुए। खर्च तो हुए ३००) और आमदनी हुई ६००)। बतलाइये ऐसा व्यापार कोई दूसरा है, जिसके कि एक के दो होते हैं। यहां किसी को यह शंका हो सकती कि आमदनी का हिसाब तो आज के गो रक्षक बतलाते हैं, पर यह बात तभी तक की हुई जब तक वह दूध देती रहे! बाद में हानि हो सकती है। इसका उत्तर वे 'नहीं' में देते हैं। और कहते हैं कि जो गौ १००) में खरीदी गई थी वह दूसरे साल पालक के घर में मुफ्त में रही और उसके साथ उसका बछड़ा भी मुफ्त में रहा। गर्भावस्था में करीब दस महीने गाय दूध नहीं देती अतएव उस समय उसकी खुराक भी कम होती है। केवल १००) में पालक को बछडा सहित गौ १२५) का माल मिला। इसके अतिरिक्त कण्डे (छाणे) और गौ-मूत्र के लाभ अलग। इस प्रकार हिसाब लगाने से बिना दूध देने वाली गौ भी खर्च के बदले ज्यादा लाभदायक ही है, हानिकारक नहीं।

सम्भव है इस कथन में कुछ अतिशयोक्ति हो, परन्तु यह तो कहा जा सकता है कि गौ थोडा खर्च लेकर ज्यादा लाभ देने वाली होती है। तात्पर्य्य "गोषु दत्तं न नश्यति" अर्थात् गौ के परिपालन में जो धन खर्च किया जाता है वह नष्ट नहीं होता।

गौ रक्षा के लिये दो शब्द

महानुभावो! आप दूर देशान्तरों से यहां चूरू शहर में पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे हैं। पूज्य श्री का गोरक्षा के सम्बन्ध में उपदेश कितना हृदय-ग्राही है। थली प्रान्त में लक्ष्मी-पतियों के होते हुए भी हजारों गायें भूखों मर रही हैं। यह कितने आश्चर्य की बात है! घास न होने के कारण गायें सस्ती बिकती हैं जिससे कसाई लोग ५) रुपये फी गाय महसूल देकर उन्हें ले जावेंगे। और फिर इन गायों का वध होगा।

मैंने गौवध के भीषण आंकडे ट्रेक्ट में पढे व संग्रह किये हैं। जिनको आपकी सेवा में उपस्थित करता हूं आप इन आंकडों को पढ और सुनकर देश के भावी कल्याण के भावों से अथवा गरीबों की भलाई एवं गो-रक्षा के भावों से दरख्वास्त करें तो मैं इन

गायों के महसूल छुडाने के लिये दयालु बीकानेर नरेश से प्रार्थना करूं। और इन गायों को कष्ट से छुडाने के लिये गो-भक्त, ब्राह्मण प्रतिपालक, हिन्दूपति, मेवाड़नाथ के चरणों मैं उदयपुर खबर पहुंचाऊं। मुझको आशा है कि श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी जो गो-रक्षा के कट्टर हिमायती हैं, वे यहां की गायों का सब दुःख श्रीमानों के चरणारविन्दों में मालूम कर अवश्य अच्छी सहायता प्रदान कराने की कोशिश करेंगे।

अब इन गायों की रक्षा के प्रश्न पर उदासीन रहने का समय नहीं है। यदि ऐसे महत्त्व पूर्ण कल्याणकारी मार्ग में आप अपना द्रव्य का सदुपयोग न करेंगे तो फिर आपको अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग करने का कौनसा अवसर मिलेगा। इस समय गोरक्षा के लिये सहायता देने से आपको आत्मिक शान्ति मिलेगी। गोपालन में कितना लाभ है और गोपालन न होने में कितनी हानि है? इन सब बातों को आपकी सेवा में निवेदन करता हुआ आशा करता हूं कि आप अपने इस नूतन जीवन में गोवंश की जितनी सेवा कर सकें उतनी उदारता पूर्वक सहर्ष करें।

भारतवर्ष जैसे कृषि-प्रधान देश में यह कम चिन्ता की बात नहीं है कि यहां केवल चौदह करोड़ पचास लाख गायें

बैल तथा दूध देने वाले पशु हैं। इनमें से भी रक्षा का पूर्ण प्रबंध न होने के कारण प्रतिवर्ष एक करोड़ गायों का वध होता है। हमारा कथन है कि भारतवर्ष में थोडी सख्या में ऐसे हिन्दू मिलेंगे कि जो गोवध के पाप से मुक्त हों। क्योंकि कपडे के कारण मिलों में चर्बी, फौज के लिये सूखा मांस, चमडे वगैरह व्यापार में गौ-हत्या के पाप के भागी हो ही जाते हैं। जिसका पश्चाताप अनेक प्रकार धर्म ध्यान, तपश्चर्या करके करते हैं तथापि गौ-श्राप के भागी हैं क्योंकि इसका पूरा विचार देश में न होने के कारण हजारों गायें प्रति दिन मरती हुई तो आपने सुनी हैं। परन्तु इस समय चूरू में गायों की रक्षा करने के लिये बिचार होना नितान्त आवश्यक है।

अब मैं गौ-रक्षा होने में लाभ, व न होने में जो हानियां होरहीं हैं वह, तथा गौ-वध के आंकड़े सुना कर अपना भाषण समाप्त करूंगा। तहसीलदार साहिब व कोठारीजी साहिब चूरू ने हालही में पूज्य श्री से दया धर्म में श्रद्धा रखने का उपदेश लिया है। अतः आशा है कि वे सज्जन भी इस बैठी हुई सभा में विचार कर इन गौओं का रक्षा का प्रबंध सोचेंगे, और इनकी रक्षा होने के लाभ तथा रक्षा न होने की हानियों को अपने विवेक रूपी तराजू में तोलेंगे, तो सब हाल भली भाँति विदित हो जावेगा।

कुछ अमृत झड़ियाँ

१. भारतवर्ष एक कृषी प्रधान देश है। गाय ही इस देश की माता है। उसीका दूध-घी हम खाते हैं और उसके दूध से तरह २ की मिठाइयाँ और पकवान बनाते हैं। यदि गाय न हो तो हमको उत्तमोत्तम पदार्थ खाने को ही न मिले।

२. गाय के बच्चे बैलों ही से खेती होती है। भारत जैसे गर्म देश में घोड़ों तथा अन्य पशुओं से खेती नहीं हो सकती। उसी बैल को गाडी में जोतकर हम सवारी भी करते हैं। यदि हमारे देश में गायों की रक्षा न की गई तो हमारा खाना-पीना, खेती-बारी सब चौपट हो जायगी। गाय ही एक ऐसा जीव है कि जिसका मल मूत्र तक भी अत्यन्त लाभदायक माना जाता है। बडे २ वैद्यों, डाक्टरों और हकीमों से दरियाफ्त करने पर मालूम हो सकता है कि गो-मूत्र और गोबर में कितने गुण विद्यमान हैं, यह आजमाई हुई बात हैं कि कैसी ही तिल्ली या कैसा ही पुराना बुखार क्यों न हो, बराबर जल के साथ ताजा गो-मूत्र का पान करने से निःसन्देह मिट जाता है।

३. गायों की रक्षा करना सचमुच अपनी ही रक्षा करना

है। साथ ही एक यह भी कारण है कि दया ही से इस लोक में सुख तथा शांति और परलोक में परमानंद प्राप्त होता है।

४. हम जिसके ऋणी हों, उसका ऋण चुकाना हमारा परम कर्तव्य है। गाय के हम बहुत अधिक ऋणी हैं और यह ऋण केवल उसकी रक्षा करके ही चुकाया जा सकता है। यदि हम ऐसा नहीं कर सकते तो हमारा जैसा कृतघ्न दूसरा नहीं होगा।

५. गाय और माँ बराबर हैं; इसी से इसको गो-माता कहते हैं। हमारा शरीर उसी के दूध, घी तथा उसके पुत्र-बैल द्वारा उत्पन्न किये हुए अन्न से पुष्ट होता एवं पलता है।

६. वे मनुष्य राक्षस हैं, जो गो-रक्षा के विरुद्ध प्रचार करते हैं, जिनके मत के अनुसार गाय की रक्षा के लिये कुछ करना, रुपया देना इत्यादि पाप है।

७. ऐसा उपयोगी पशु और कौन होगा जो मरने पर भी हमारे काम आता है।

कृषि-गोरक्षा

गोरक्षां कृषि वाणिज्ये कुर्य्यात् वैश्यो यथा विधि ।

भारत कृषिप्रधान देश है। यहां फी सैंकडा ८० लोग कृषि पर जीविका चलाते हैं। कृषि का ज्ञान जितना बढ़ेगा उतना ही इस देश का कल्याण होगा। कृषि के लियें सब से अधिक गौ-रक्षा का प्रयोजन होने से इस लेख में कृषि पर विचार न कर केवल गौ-रक्षा के लिये 'काऊ प्रोटेक्शन लीग' ने जो उपाय स्थिर किये हैं उन्हींका उल्लेख कर दिया जाता है। आशा है कि सर्व साधारण इन नीचे लिखे हुए उपायों से लाभ उठावेंगे।

१. अपने अपने घर कम से कम एक एक गौ का पालन अवश्य कीजिये, और दूसरों से कराईये।

२. अपने गांव में ऐसा प्रबन्ध कीजिये कि कोई किसी बेजान पहचान आदमी के हाथ गौ न बेचें और मेले या हाट में बिकने के लिये न भेजें बहुत से गांव वालों को यह पता नहीं रहता कि जो गाय या बैल को बेचते हैं उनकी क्या दुर्गति होती है। किस तरह कसाई के हाथ पड़कर उनका प्राणान्त होता है। स्वयं कसाई ही माथे में चन्दन लगा, गले में फूलों

की माला डाल या और वेष बनाकर गाय बैल खरीद कर ले जाते हैं। इसलिये गांववालों को चाहिये कि गाय बैल वेचें ही नहीं।

३. जहां गौओं के हाट मेले लगते हों वहां से वे हमेशा के लिये उठवा दीजिये।

४. आप जिस स्थान में रहते हैं उस स्थान के सब लोगों को कहिये कि वे गो-वध बन्द कराने के लिये म्युनिसिपैलिटी कौंसिल और सरकार के पास प्रार्थनापत्र भेजें। जैसे सी० पी० गवर्नमेन्ट ने अपने कसाईखानों के सम्बन्ध में ता० ३१ मई सन् १९२२ ई० को कई एक नियम बनाये हैं जिनमें से छट्ठे नियम के अनुसार (१) सब प्रकार की गायें नहीं मारी जासकेंगी (२) जो भेड़, बकरी तथा भैंस गर्भवती होगी या दूध देती होगी वह भी न मारी जासकेगी तथा (३) ९ वर्ष से कम उम्र का बैल, भैंसा और भैंस भी नहीं मारी जा सकेगी, वैसे ही चेष्टा करके अन्य प्रान्तीय सरकारों से भी नियम बनवावें।

५. गोचर भूमि की वृद्धि के लिये सरकार, कौंसिल, म्युनिसिपैलिटी, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड तथा राजा-महाराजाओं और

जमींदारों से प्रार्थना कीजिये। उन लोगों से यह भी आग्रह कीजिये कि वे जनता में सस्ते गो साहित्य का प्रचार करें।

६. डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, म्युनिसिपैलिटी, राजा, महाराजा, जमींदार या जो कोई हों उनसे कहकर अच्छे अच्छे सांड और गौ चिकित्सक रखाने की कोशिश कीजिये।

७. दरिद्रता से पीड़ित होकर बहुत से लोग गौएं बेच देते हैं उनके लिये गौशाला बना लीजिये।

८. देशी रजवाडों से अपील करके अपने यहां की गौओं का बाहर भेजा जाना एकदम बन्द करवादें।

९. हिसार, रोहतक, मुलतान और कंकरोज आदि पंजाब के स्थानों में उपदेशक भेजकर वहां गौओं का बेचा जाना बंद करादें क्योंकि यहीं से ज्यादातर गौएं उन स्थानों में जाती हैं जहां फूंके से उनका दूध निकाला जाता है और छः महीने में वे कसाई खाने में भेज दीजाती हैं।

१०. सरकारी कसाईखानों में गौ-वध बहुत वडी संख्या में किया जाता है इसलिये इन कसाईखानों को उठवा देने के लिये सरकार पर पूरा दबाव डालें तथा म्युनिसिपैलिटी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड

एवं कौंसिलों और समाचार पत्रों में इसके लिये आन्दोलन करें। आंदोलकों को आर्थिक सहायता देवें।

११. इस काम में हिन्दू मुसलमान इत्यादि कोई भेदभाव न रक्खें, सब मिलकर काम करें क्योंकि गो-वंश नाश से भारत का ही नाश है।

१२. इन सब बातों का प्रचार अपने स्थान में करें। और दूसरे स्थानों में कराने के लिये उपदेशक भेजें।

१३. अपने अपने स्थान में इन कामों के लिये एक एक गोरक्षिणी सभा स्थापित करें और उसकी सूचना हमें भी देदें।

ऊपर जिस सस्ते गो साहित्य का उल्लेख किया है वह 'श्रीयुत् पंडित गंगाप्रसादजी अग्निहोत्री जबलपुर मध्यप्रदेश' से मिलता है। लिखे पढ़े किसानों में उसका प्रचार करने से गो-वंश का परिपालन ऐसे ढंग से किया जा सकता है कि जिससे गो-वंश की उपयोगिता बढ़ती है। गो-वंश की उपयोगिता को बढ़ाना ही गो-वध रोकने का राजमार्ग है।

गो-धन की रक्षा करो

गो ब्राह्मण परिभाने परिभ्रातं जगद्भवेत्

भगवान् महावीर स्वामी ने अहिंसा धर्म का झण्डा इस भारत भूमि में फहराया था। उस समय इस देश में लाखों व्रतधारी श्रावक व करोड़ों उनके अनुयायी मनुष्य थे। और उस समय यह देव दुर्लभ भूमि घी दूध का उद्भव-स्थान बनी हुई थी। तत्कालीन भारत में गायें कितनी थीं इसका अनुमान नीचे की संक्षिप्त तालिका से सहज ही हो सकता है जो कि उपासक दशांग सूत्र से उद्धृत की जाती है।

क्रमाङ्क	नाम	गौ-संख्या
१	श्रावक आनन्दजी	४००००
२	श्रावक कामदेवजी	६००००
३	श्रावक चुलनिपिताजी	८००००
४	श्रावक सुरादेवजी	६००००
५	श्रावक चूलशतकजी	६००००
६	श्रावक कुण्डकोलिकजी	६००००
७	श्रावक सद्दालपुत्रजी	१००००

क्रमाङ्क	नाम	गौ-संख्या
८	श्रावक महाशतकजी	६००००
९	श्रावक नन्दिनीपिताजी	४००००
१०	श्रावक सालिहीपिताजी	४००००

यहां कहने की आवश्यकता नहीं कि जब दश श्रावकों के पास ५३०००० गायें थीं तो भारत के अन्य लाखों करोड़ों मनुष्यों के पास कितनी गायें होंगी? भगवान् महावीर के निर्वाण काल के पीछे गो-रक्षा के प्रति मनुष्यों की ज्यों २ उदासीनता होती गई त्यों २ दूध दही और घृत आदि पौष्टिक गव्य पदार्थों की दिन २ कमी होती गई और होती जाती है। साथ ही सात्विक भोज्यान्नों के पौष्टिक तत्वों की कमी होती गई।

आर्य्य-कला का बहिष्कार करके भारतियों ने आसुरी-कला को अपनाया, और द्वीपान्तर के अपवित्र चटकीले वस्त्रों को पसन्द किया, और कल्प की चर्बी के लिये भारतीय गायों को कसाई लोग खरीद-खरीद कर मिलों के हवाले करने लगे तब ही से दूध, दही और घृत के फाके और लाले पड़ने लगे। और लोग चर्बी मिला हुआ घृत खाने लगे हैं। उपासक दशांग सूत्र में भगवान महावीर ने दश श्रावकों के गो-धन का वर्णन किया उसके मुकाबले में भारत की तेंतीस करोड़ जनता में आज

एकभी ऐसा मनुष्य नहीं है कि जिसके पास इतनी गौएँ हों। गौ-धन की वृद्धि करना तो दूर रहा परन्तु गौओं को कसाईखाने में बेचने से भी नहीं शरमाते। हाय स्वार्थपरते! तुझ पर वज्र पात हो! भारत के दयालु सज्जनों! अब तो आप विलासिता को छोडिये, और भारत की प्राण स्वरूपा गौ माता, जो रोज लाखों की संख्या में कसाइयों की छुरी के घाट उतारी जाती हैं, उनका उद्धार कीजिये। उनके वध होने का, दुधारू पशुओं का, चारा चरनेवाले पशुओं का नकशा व अन्य देशों में गोचर भूमि डेयरी आदि आवश्यक उपयोगिता पाठकों की जानकारी के लिये संग्रह करके देता हूं। भारतवर्ष कृषि प्रधान होने से, तथा भारतवासियों के शरीर पुष्टि के साधन घृत, दूध, दही आदि गव्य पदार्थ ही होने के कारण अत्यन्त आवश्यक है कि गोरक्षा, गोपालन और गो-पोषण आदि विषयों पर अधिक ध्यान दिया जावे, और घर घर में गाय रखी जावें और उनका उचित रूप से परिपालन किया जाय। अभी गो पालन बहुत बुरे ढंग से किया जाता है। इसीलिये गोवंश के प्राणी बहुत बड़ी संख्या में पतित और विनाश हो जाते हैं। यह धर्म कार्य का प्रधान स्वरूप हो जावेगा तो न गायें भूखों मरेंगी और न गायें कटेंगी। पौष्टिक चारा दाना ही गोरक्षा का प्रधान साधन है।

कालचक्र के परिवर्तन से हम अपनी असावधानता और दुर्बलता के कारण गौरक्षा का वास्तविक कर्तव्य भूल गये। इस विषय पर ध्यान देने में श्री गोपाल का उपदेश हम भूल गये। जिसका परिणाम यह हुआ कि हम लोग दुर्बल, आलसी और वीर्य हीन हो गये। इतना ही नहीं, गौ का दूध शुद्ध रूप और पर्याप्त मात्रा में प्रति दिन नहीं मिलने से रोग, शोक ने हमें घेर लिया जिससे हम लोग अल्पायु होने लग गये। यह प्रत्यक्ष है कि दिनों दिन हमारी सन्तान क्षीण, शक्ति और वीर्य हीन होती जाती है। और दूध बिना हमारा भविष्य दुखदाई दिखलाई दे रहा है। ऐसी नाज़ुक अवस्था में हम तन, मन और धन गौ सेवा में अर्पण कर देश सेवा में गो रक्षा को पहिला स्थान देकर उद्यमी बनें।

भगवान महावीर के श्रावकों ने जैसा लक्ष्य गो सेवा का रक्खा और सारे भूमण्डल में अहिंसा की ध्वनि फैलाई वैसे हम भी गौ रक्षा तथा जीव रक्षा के परोपकारी काम करेंगे तो अत्यन्त लाभ होगा। कहना नहीं होगा कि गो वंश की तथा विद्वानों की रक्षा से ही संसार भर की रक्षा होती है।

गो-वंश के ह्रास के कारण

भारतवर्ष में गौ-जाति की अवनति का कारण देशांतरों में बहुत अधिक चमड़े की रफतनी है। सन् १६०३-४ ई० में ३२,००,००,००० रुपयों का चमड़ा भारतवर्ष से बाहिर गया। इतिहासों से पता लगता है कि सिकन्दर आजम जब भारत वर्ष से स्वदेश लौटा था तब वह अपने साथ २००००० गायें भारतवर्ष से ग्रीक लेगया था। इससे यह बात भली भांति सिद्ध होती है कि उस समय और उससे पहले भारतवर्ष की भूमि गौजाति से परिपूर्ण थी।

आईने-अकबरी से जाना जाता है कि अकबर के समय में २॥) रु० मन घी और ॥=) मन दूध बिकता था। अब यहां एक सेर घी का दाम २॥) रुपया है। यदि यही दशा रही तो भारतवर्ष में कुछ दिन बाद दूध और घी का मिलना कठिन हो जायगा। अब अमेरिका, स्वीटजरलेण्ड, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड से जमा हुआ दूध तथा मक्खन भारतवर्ष में आता है। यही जमा हुआ दूध पीकर आजकल भारतवर्ष में धनवानों के बच्चे पलते हैं। घी के अभाव के कारण अच्छे कार्य प्रायः लोप हो गये हैं। घृत के बदले घृणित पशुओं की चर्बी काम में

लाई जाती है। वह विष तुल्य है, गो-जाति के ह्रास के कारणों में से कुछ निम्नलिखित हैं:—

(१) गोवध और गो परिपालन का अज्ञान।

(२) गोचर भूमि की कमी और उसकी खेती का अज्ञान।

(३) उत्कृष्ट साडों की और उनके परिपालन की उपेक्षा।

(४) चमड़े का व्यवसाय बढ़ जाना।

(५) भारत में गोपालन और गौचिकित्सा के लिये विद्यालयों का अभाव।

(६) गौचिकित्सालय तथा औषधालय का अभाव।

(७) गौ चिकित्सकों का अभाव।

(८) गोपालन शिक्षा तथा गौचिकित्सा के सम्बन्धी पुस्तकों या ग्रन्थों का अभाव।

(९) दूध के लालच से अधिक दूध निकालना और बच्चों के लिये दूध न छोड़ना, जिससे वे मर जाँय अथवा बच्चों को दूध न देने पायें। इससे बेंच डालना।

(१०) कहीं कहीं फूका देकर दूध निकालना, जिससे गायों की गर्भधारणशक्ति नष्ट हो जाती है।

(११) गाय के खाद्यपदार्थों का अभाव।

(१२) शिक्षित लोगों की गोपालन से घृणा और अशिक्षितों द्वारा गौपालन होना।

समस्त ग्रेट ब्रिटेन में ७,७५,००,००० एकड़ भूमि में से ४६,००,००० एकड़ भूमि पर नाना प्रकार की फ़सल, घास और कृषि होती है। उसमें से पहाड़ तथा बस्ती को छोड कर २,३०,००,००० एकड भूमि स्थायी गोचर और घास की भूमि है। इङ्गलैण्ड की भूमि अधिक मूल्यवान है तिस पर भी आधी भूमि स्थायी गौचर भूमि है। परन्तु हमारे भारतवर्ष में स्थायी गौचर भूमि है ही नहीं। यही गोचर भूमि का न होना गौजाति की विशेष हानि का कारण है।

गाय से जो नर बच्चा पैदा होता है, वह बड़ा होने पर बैल हो जाता है। उस बैल से खेती का काम लिया जाता है। यदि भारतवर्ष में बैल न हो तो अकेली खेती क्या सैंकड़ों तरह के काम कठिन हो जायेंगे। बैलों के द्वारा माल एक स्थान से दूसरे स्थान में पहुंचाया जाता है, हल

२

जुतवाया और कोल्हू चलाया जाता है। जहां रेल नहीं है, वहां सवारी का काम भी लिया जाता है।

भारतवर्ष में पूर्वकाल में एक-एक गाय का २० सेर से अधिक दूध होता था। आईन-ए-अकबरी से भी यही बात सिद्ध होती है कि अकबर के समय में अर्थात आज से प्रायः ३२५ वर्ष पहले एक-एक गाय के आधमन और इससे अधिक दूध होता था। विलायती गायों के इस समय भी २५ सेर से ३० सेर तक दूध होता है।

पहले दूध अधिक और अब कम होने का कारण क्या है? इसका उत्तर केवल यही है कि पहले गवायुर्वेद के अनुसार गो-पालन ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य स्वयं करते थे, परन्तु अब इसका भार प्रायः निरक्षर और अज्ञान शूद्रों के हाथ में है, जिससे गौ जाति की यह हीन दशा होगई है।

दूध एक ऐसी वस्तु है जिसके बिना मनुष्य का जीवन धारण करना कठिन है, क्योंकि जिस समय बच्चा उत्पन्न होता है, उसी समय (रुई द्वारा) उसे दूध पिलाया जाता है। बिना दूध और गाय के संसार में कोई देश जीवित नहीं रह सकता है गाय का दूध ही एक ऐसी वस्तु है जिसको

खा-पीकर मनुष्य और कोई वस्तु न खाकर भी संसार यात्रा निर्वाह कर सकता है।

इसका कारण यह है कि मनुष्य की जीवनी शक्ति को दृढ़ बनाने तथा मनुष्य के शरीर को पुष्ट करने के लिए माड़ (लसीला तरल पदार्थ) मीठा, नमक और घृत (चिकना तरल पदार्थ) आदि जिन पदार्थों की आवश्यकता होती है, वे सभी गाय के दूध में एक ही साथ संमिश्रित पाये जाते हैं। साथ ही विशुद्ध दूध का पृथक्करण करके देखा गया है, कि उसमें कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जिससे मनुष्य की कुछ भी हानि हो।

गाय के दूध के सिवाय और किसी भी पदार्थ में ये चारों पदार्थ ऐसे उपयुक्त परिमाण में नहीं पाये जाते। इसीसे मनुष्य और कोई चीज न खाकर यदि केवल दूध पीये, तो केवल जीवन ही नहीं धारण कर सकता, बल्कि हृष्ट-पुष्ट भी रह सकता है।

दुग्धशाला (डेयरी) की आवश्यकता

भारतवर्ष में दूध, घी और मक्खन इत्यादि की जो दशा इस समय हो रही है उससे यह सन्देह होता है कि कुछ दिन पीछे दूध और घृत का अभाव होना सम्भव है। दूध के बिना जीवन यात्रा कठिन ही नहीं वरन् असम्भव है। दूध के अभाव के कारण ही धनवानों के बालकों को जमा हुआ दूध (जो विदेशों से आता है) दिया जाता है और उसीसे उनका पालन होता है। जमाया हुआ और अधिक दिनों का बासा दूध कितना हानिकारक हो सकता है, यह सभी लोग भली भांति समझ सकते हैं। ताजे दूध के समान व किसी दूसरी वस्तु अथवा खाद्य पदार्थ की तुलना नहीं हो सकती। जब ऐसी दशा है, तब भारतवर्ष में ऐसी चेष्टा क्यों नहीं की जाय, जिससे सर्व साधारण को सुभीते से शुद्ध दूध, दही, मक्खन और घृत इत्यादि मिल सकें? इसका कारण यही प्रतीत होता है कि अब भारतवासी तथा सामान्य मनुष्यों को गाय के परिपालन में सामर्थ्य नहीं है। इसका सुगम उपाय यही हो सकता है कि जो लोग सामर्थ्य रखते हैं, वे अकेले

नहीं तो कुछ लोग मिलकर समवाय समिति (Co-operative society) स्थापन करके भारतवर्ष भर में डेयरियाँ खोलें, जिससे अपने लाभ के साथ-साथ जन साधारण को भी लाभ और सुभीता हो।

डेयरी उस स्थान को कहते हैं, जहाँ घी, दूध इत्यादि शुद्धतापूर्वक अधिक मात्रा में पैदा किया जाता है। डेयरी-फारमिङ्ग (Dairy farming) से अभिप्राय है, गाय अथवा भैंस रखकर दूध, घी, मक्खन इत्यादि का उत्पादन और विक्रय करना। भारतवर्ष, डेयरी करने के लिये दूसरे देशों की अपेक्षा, बहुत ही उत्तम है, क्योंकि यहां भूमि, चारा मजदूरी और दूध देनेवाले पशु अर्थात् गाय, भैंस आदि दूसरे देशों की अपेक्षा सस्ते हैं। इसके सिवाय यहां की गाय का दूध यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया इत्यादि देशों की गायों से अच्छा होता है। भारतवर्ष में दूध, और घी का दाम भी दूसरे देशों की अपेक्षा अधिक मिलता है। दूसरे देशों की गाय के २५ सेर से ४० सेर तक दूध में एक सेर मक्खन निकलता है परन्तु भारतवर्ष की गाय के १२ सेर से २४ सेर तक दूध में १ सेर मक्खन निकलता है। तिसपर भी इङ्गलैंड में १ सेर मक्खन का दाम १॥) से १॥।) तक है और अमेरिका में ॥।) से १।) तक है। परन्तु उसी १ सेर

मक्खन का दाम भारतवर्ष के बड़े शहरों में २) से २॥) तक है। यूरोप में दूध का भाव ≠)॥ से =)॥ सेर तक और अमेरिका में ≠)। से =) तक है, पर भारतवर्ष में =) से ।।=) तक का भाव बड़े नगरों में है। छोटे छोटे गाँवों में, जहां दूध के ग्राहक कम हैं वहां ≠)। से =) तक का भाव है। यहां घी अथवा मक्खन बनाने में यूरोप और अमेरिका की अपेक्षा व्यय बहुत कम पड़ता है जो कि ऊपर दिखलाया गया है, दाम अधिक आता है। इसी कारण यहां डेयरी खोलने से दूसरे देशों की अपेक्षा लाभ भी अधिक हो सकता है। परन्तु यह लाभ तभी हो सकता है जब यह काम बड़े प्रमाण में वैज्ञानिक ढङ्ग पर चलाया जायगा। जिन भारतीय धनवानों ने कपड़ों की मिलों में रुपया लगा रक्खा है उन्हें चाहिये कि वे लोग अपनी मिलों को लाभदायक और चिरञ्जीवी बनाने के लिये दुग्धालयों के व्यवसाय में भी धन लगा कर उसका संचालन करें। और उस व्यवसाय द्वारा भारत को एकबार पुनः गवाढ्य और धनाढ्य बनावें।

अन्य देशों की गोचरभूमि

डेनमार्क में कृषि-सम्बन्धी व्यवसायों में सब से अधिक लाभदायक गाय ही समझी जाती है।

डेनमार्क में पहली डेयरी सन् १८८२ ई० में खुली थी। और सन् १९१२ ई० में ११९० डेयारियां इस प्रकार की हो गयी थीं कि जिनमें १२८२२५४ गायें थीं।

डेनमार्क में कृषि सम्बन्धी कारबार और बाहिरी व्यवसाय और डेयरी के काम में सब से अधिक लाभ है। कुलमाल जो सन् १९१२ ई० में डेनमार्क में बिका उसका दाम ३७२१००००० क्रौंस था। जिसमें ६७ सैंकडा डेयरी का माल था। मक्खन क्रीम और दूध जो डेनमार्क से बाहर गया उसका मूल्य ११८८८००० पौंड अर्थात् १७,८३,२०,०००) होता है, अर्थात् ४१ सैंकडा कुल माल का होता है जो देश से बाहर गया।

डेनमार्क में भैंस नहीं है और केवल गाय का दूध मक्खन बनाने के काम में आता है। डेनमार्क में दूध देने वाले पशुओं का परिपालन शास्त्रविहित रीति से किया

जाता है। और दूध ही के कारबार ने डेनमार्क की कृषि को लाभदायक बनाया है। १९ वीं शताब्दी तक डेनमार्क के किसान गेहूं की कृषि में लगे हुए थे और पशुओं की ओर उनका जरा भी ध्यान नहीं था। इसका परिणाम यह हुआ कि फसल कम होने लगी। वही फसल अच्छी होती थी, जहां पाँस दी जाती थी (Paras 93 and 94 of the report of the Irish Deputation of 1903) किसानों का मुख्य उद्देश्य डेनमार्क में दूध और दूध से बनी हुई वस्तुओं का तैयार करना है। यहां तक कि दूसरी कृषि सम्बन्धी वस्तुओं से मक्खन बनाया जाता है।

ग्रेट-ब्रिटेन और आयरलैण्ड की कुल भूमि ७,७५,००,००० एकड़ है जिसमें ४,९०,००,००० एकड़ में फसल होती, खाली रहती या घास होती है। २३,००० एकड़ भूमि गोचर-भूमि के लिये छोड़दी गई है। (*Vide* cattle, Sheep Deer, Page 13 Macdonald)।

जर्मनी की सन् १८९३ और १९०० ई० की रिपोर्टों से जाना जाता है कि उस देश में ९१ सैंकड़ा भूमि उर्वरा और ९ सैंकड़ा ऊसर है, ६,५१,९९,५३० एकड़ भूमि पर खेती हुई थी। २१,३९,७०० एकड़ भूमि पर घास और गोचर भूमि थी।

यूनाइटेड-स्टेस् अमेरिका के केवल स्टेकसास प्रान्त में ४०,००,००० गायें और उनके बच्चे हैं, जिनके लिये ४०,६६० एकड़ भूमि पर भिन्न भिन्न स्थानों में डेयरी फार्म स्थापित हैं। (*Vide* Macdonald cattle sheep Deer, Pages 194 and 195)।

अमेरिका, आष्ट्रेलिया, हालैण्ड, न्यूजीलैण्ड इत्यादि देशों मे गोचरभूमि की व्यवस्था ग्रेट-ब्रिटेन के अनुसार ही है।

न्यूजीलैण्ड में कुल भूमि ६,७०,४०,६४० एकड़ है, जिसमें २,८०,००,००० एकड़ पर कृषि होती है। और २,७२,००,००० एकड़ गोचर भूमि है। (*Vide* standard cyclopedea of Modern Agirculture, Page—88 Volume—9)।

उपर्युक्त विवरण से विदित होता है कि प्रायः सभी देशों में गोचरभूमि का खास प्रबंध है, परन्तु हमारे भारतवर्ष में गोचर भूमि का पूरा अभाव है। इसी कारण से गोजाति तथा कृषि की दशा इस देश में शोचनीय हो रही है। यदि इस देश में गोचर भूमि का प्रबंध होजाय और गो पालन की ओर लोग पूर्ववत ध्यान देने लगें तो भारतवर्ष फिर पहिले की सी उन्नत अवस्था पर पहुंच सकता है।

उक्त देशों में गोचर भूमि (Pasture land) उसी को कहते हैं जिसमें पशुओं के लिये चारे की खेती की जाती है अर्थात् वे खेत प्रति वर्ष जोते जाते हैं, उन्हें खाद दिया जाता है उनमें चारे के बीज बोये जाते हैं, तथा सींचे भी जाते हैं, उन खेतों में खड़ी फसलें पशुओं को चराई जाती, और उनके पक जाने पर वे सूखाकर रखली जाती हैं। क्योंकि वे बहुत पौष्टिक, सुस्वादु और रसीली होती हैं।

गो-रक्षा की आवश्यकता और उपयोगिता

गाय पालन से प्रथम मनुष्य के स्वास्थ्य को बढाने वाला ताजा और विशुद्ध दूध प्राप्त होता है। दूध से ही मक्खन तथा घी बनाया जाता है। जो लोग दूध नहीं पीते, वे मक्खन या घी का व्यवहार अवश्य करते हैं। यदि दूध विशुद्ध नहीं है तो उससे बना हुवा मक्खन या घी कदापि शुद्ध, नहीं हो सकता। अशुद्ध तथा मिश्रित दूध और घी सदा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। जिन गौओं को दूषित दाना चारा दिया जाता है उनका दूध स्वास्थ्य कर नहीं होता।

द्वितीय लाभ यह है कि घर में गाय होने से शुद्ध दूध सस्ता पड़ता है। क्योंकि जितना दूध गाय देती है, उससे आधा अथवा तीन चौथाई से अधिक व्यय उसके रखने और खिलाने में नहीं होता। जितना अधिक दूध देने वाली गाय होगी। उतना ही उसके पालने में (उसकी आय से) व्यय कम होगा।

तीसरा लाभ गाय का बच्चा है। यदि वह नर हुवा तो दूध बन्द होने पर बहुत अच्छे दामों में बिक सकता है। और मादा हुई तो कुछ दिनों बाद गाय होजाती है।

चौथा लाभ गोबर है। गोबर से इन्धन का काम लिया जाता है, इसके कण्डे और ओपले बनाये जाते हैं, जो लकड़ी की जगह जलाने का काम देते हैं। गोबर का खाद बहुत अच्छा होता है, क्योंकि इससे खेतों की उपज बहुत बढ़ जाती है। गोबर से दुर्गन्ध भी दूर होती है। जिन स्थानों पर फिनाइल नहीं मिलता; वहां गोबर से, विषाक्त तथा दुर्गन्धित स्थान को परिष्कृत करने के लिये फिनायल की की एवज में काम लिया जा सकता है। बल्कि साइन्स की दृष्टि से देखने से पता चलता है कि फिनायल की सफाई से गोबर की सफाई कहीं विशेष उपयोगी है। गो-वंश के

गोबर और मूत से खाद का काम लेना जितना लाभदायक है, उतना ही हानि कारक उसे कंडे बनाकर जलाना है।

गाय के दूध बिना मनुष्य का काम नहीं चल सकता। बच्चे के पैदा होते ही उसको दूध की आवश्यकता पड़ती है। उसको दूध उसी समय से पिलाया जाता है। और जन्म से मरण पर्य्यन्त मनुष्य दूध का व्यवहार करता रहता है। जब मनुष्य बीमार होता है और उसका खाना पीना बन्द हो जाता है उस समय भी बल बनाए रखने के लिये डाक्टर, वैद्य, हकीम आदि सब ही शुद्ध दूध की राय देते हैं। दूध से मक्खन, मक्खन से घी बनाया जाता है। दही, मट्ठा, मावा इत्यादि भी दूध ही से बनते हैं। दूध से सैकड़ों तरह के अति उत्तम खाद्य पदार्थ भी बनाए जाते हैं। यह बात किसी से छिपी नहीं है।

भारत के हाल के दुधारु पशुओं की संख्या का नक़्शा.

	बैल	गाएँ	बछड़े-बछड़ी	भैंसा	भैंस	पाडे-पाडी बच्चे	कुल जोड़
ब्रिटिश-भारत (सन् १९२३-१९२४,)	४६४१४९२८	३७२१६३७०	३०८५५६०५	५४२७५९३	१२५३५४५५	१००४५२८२	१४६४९८२३२
देशी राज्य (सन् १९२२-१९२३.)	१०५१८६२०	९७८८६६५	५६०५४००	११०९२५८	४०२५३२५	१९०३१४२	३२९५०४११
जोड	५६९३३५४८	४७००५०३५	३६४६१००५	६५३६८५१	१६५६०७८०	११९४८४२४	१७९४४८६४३

चारा चरनेवाले पशुओं की संख्या का नकशा

समस्त भारत में गौवंश की संख्या १४,३४,०२,५८८। समस्त भारत के भैंसा व भैंस की संख्या ३,६०,४६,०५५ है।

	भेड़	बकरा बकरी	घोड़ा-घोड़ी	ऊँट	खच्चर	गधे	कुल जोड़
ब्रिटिश-भारत (सन् १९२३-१९२४)	२२३३९९६१	२६०१७४०८	१६७१४६४	४३९१५८	७५५१८	१३७९४२०	४१९२२९२९
देशी राज्य (सन् १९२२-१९२३)	१११९९३०३	८३९८६१५	४९२७६२	१२१७०४	५१६८	३५४९३१	२०५७२४८३
जोड़	३३५३८२६४	३४४१६०२३	२१६४२२६	५६०८६२	८०६८६	१४३४३५१	७२४९५४१२

गाय के दूध मूत्र आदि से रोग नाश

गाय के दूध और घी में चीनी मिला कर पीने से बदन में ताकत आती है और बल व पुरूषार्थ बढता है।

जिस मनुष्य की आंख में जलन रहती हो, यदि वह कपड़े की कई तह करके उसको गाय के दूध में तर करके आंखों पर रक्खे और उपर से फिटकिरी पीस कर पट्टी पर बुरक दे तो चार छः दिन में नैत्र जलन कम हो जाती है।

गाय का दूध ओटा कर गरम-गरम पीने से हिचकी आराम हो जाती है। गाय के दूध को गर्म करके उस में मिश्री और काली मिर्च पीस कर मिलाने और पीने से जुकाम में बहुत लाभ होते देखा गया है।

गाय के दूध से बादाम की खीर पका कर ३-४ दिन सेवन करने से आधे शीशी (आधे सिर का दर्द) आराम हो जाता है।

अगर खून की गर्मी से सिर में दर्द हो तो गाय के दूध में रुई का मोटा फाहा भिगो कर सिर पर रखने से फायदा होता है किन्तु संध्या समय सिर धोकर मक्खन मलना जरूरी है।

अगर किसी तरह भोजन के साथ कांच का सफूफ (चूरा) खाने में आजाय तो गाय का दूध पीने से बहुत लाभ होता है।

गाय के दूध में सोंठ घिस कर गाढा गाढा लेप करने से अत्यन्त प्रबल सिर दर्द भी आराम हो जाता है। गाय के गोबर से चोका देने से हानिकारक सूक्ष्म कीट (जर्म) नहीं रहते।

गो मूत्र पिलाने से खुजली रोग का नाश होता है।

इसका दूध अनेक रोगों को नाश करने वाला है। इसका दूध परम सतोगुणी हैं इसी से बड़े २ महात्मा इसको पीकर योगाभ्यास करके देव पद को प्राप्त होते हैं।

गो पालने की रीतियां

जो महानुभाव गोपालन करना चाहते हों वे निम्न लिखित गोपालन के नियमों को ध्यान में रखे—

(१) जहां पूरा प्रकाश रहता हो, वहां गायें रक्खी जावें। स्थान साफ रखना चाहिये अर्थात् वहां पर कूड़ा कचरा न हो, जिससे पिस्सू आदि जन्तु उनको न सतावें।

(२) बड़ी गायों को अलग व छोटी गायों को अलग रखें। दोनों तरह की गायों को शामिल नहीं रखें।

(३) गायों को प्रति दिन शुद्ध स्वच्छ जल यथा समय पिलाना चाहिये। जिन गायों को समय पर पानी नहीं पिलाया जाता वे नालियों में मैला पानी पी लेती हैं जिससे दूध खराब व कम देने लगती हैं।

(४) गायों को समय पर पेट भर शुद्ध और पौष्टिक दाना व चारा देना चाहिये। भूसा खिलाने से दूध कम हो जाता है। इसलिये पेटभर अच्छा घास व दाना खिलाना चाहिये। पेट भर खाना नहीं मिलने से गायें मैला खा लेती हैं जिससे दूध विष तुल्य हो जाता है।

(५) लगभग सब हिन्दू और जैन गायों को माता कह कर पुकारते हैं परन्तु जब तक वे दूध देती हैं तब तक तो पूरा घास दाना देते हैं और पीठ पर हाथ फेरते हैं तथा प्रेम दर्शाते हैं जिससे वे पूरा दूध देती हैं। और जब कभी उनकी प्रकृति के विरुद्ध उनके पेट में घास दाना पहुंचता है और

दूध कम देती हैं तब माता का लिहाज न कर पूरा दाना घास ही नहीं देते यही नहीं किन्तु और ऊपर से गालियों की बौछार भी किया करते हैं। और कोई २ तो यहां तक निर्दयता कर बैठते हैं कि उन पर लकड़ियों से प्रचंड प्रहार भी करते हैं, जिसका फल उलटा होता है। यानी शनैः २ दूध कम होता है। इसलिये गाय को न तो मारना चाहिये और न उन पर वृथा क्रोध ही करना चाहिये। कारण कि गाय कमजोर होने से दूसरी दफा बियाने पर (बच्चा उत्पन्न करने पर) कम दूध देती हैं। गायों की अच्छी हिफाजत करने पर २५ सेर तक दूध बढा देती हैं। ऐसा प्रमाण "किसानों की कामधेनु" से मिलता है।

(६) दूध देने वाली गाय को चरने के लिये २–३ मील से दूर नहीं भेजना चाहिये। और घर पर बन्धी हुई भी न रखना चाहिये।

(७) यदि गाय दुहने के स्थान पर गोबर, मूत्र और कूड़ा कचरा पड़ा हुआ हो तो वहां गाय नहीं दुहना

चाहिये क्योंकि बारीक जन्तु दूध में पड़ जाने से दूध खराब हो जाता है।

(८) दूध दुहकर कपड़े से ढांक लेना चाहिये और गाय का दूध सबके सामने नहीं दुहना चाहिये। जितनी गाय प्रसन्न रहती है उतना ही दूध ज्यादा देती है। यह बात हमेशा ध्यान में रखना चाहिये।

(९) गाय को लम्बे डांकरे व लम्बी घास नहीं खिलाना चाहिये। अच्छा घास खिलाने से दूध बढ़ता है।

तात्पर्य्य गौ का उत्तम रीति से पालन करने से वह प्रसन्न होती है और प्रसन्न होने पर अकेले उत्तम दूध ही अधिक नहीं देती किन्तु मनुष्यों की सब आवश्यकताओं को पूरा करती है।

❀ गो-रक्षा दृश्य ❀

(अदालती कार्रवाई)

अदालत तहसील चुरू

हम नीचे दस्तखत करने वाले, पूज्य श्री महाराज जवाहिरलालजी के दर्शनों के लिये मेवाड़, मारवाड़, गुजरात तथा

दूध कम देती हैं तब माता का लिहाज न कर पूरा दाना घास ही नहीं देते यही नहीं किन्तु और ऊपर से गालियों की बौछार भी किया करते हैं। और कोई २ तो यहां तक निर्दयता कर बैठते हैं कि उन पर लकड़ियों से प्रचंड प्रहार भी करते हैं, जिसका फल उलटा होता है। यानी शनैः २ दूध कम होता है। इसलिये गाय को न तो मारना चाहिये और न उन पर वृथा क्रोध ही करना चाहिये। कारण कि गाय कमजोर होने से दूसरी दफा बियाने पर (बच्चा उत्पन्न करने पर) कम दूध देती हैं। गायों की अच्छी हिफाजत करने पर २५ सेर तक दूध बढा देती हैं। ऐसा प्रमाण "किसानों की कामधेनु" से मिलता है।

(६) दूध देने वाली गाय को चरने के लिये २–३ मील से दूर नहीं भेजना चाहिये। और घर पर बन्धी हुई भी न रखना चाहिये।

(७) यदि गाय दुहने के स्थान पर गोबर, मूत्र और कूड़ा कचरा पड़ा हुआ हो तो वहां गाय नहीं दुहना

चाहिये क्योंकि बारीक जन्तु दूध में पड़ जाने से दूध खराब हो जाता है।

(८) दूध दुहकर कपड़े से ढांक लेना चाहिये और गाय का दूध सबके सामने नहीं दुहना चाहिये। जितनी गाय प्रसन्न रहती है उतना ही दूध ज्यादा देती है। यह बात हमेशा ध्यान में रखना चाहिये।

(९) गाय को लम्बे डांकरे व लम्बी घास नहीं खिलाना चाहिये। अच्छा घास खिलाने से दूध बढ़ता है।

तात्पर्य्य गौ का उत्तम रीति से पालन करने से वह प्रसन्न होती है और प्रसन्न होने पर अकेले उत्तम दूध ही अधिक नहीं देती किन्तु मनुष्यों की सब आवश्यकताओं को पूरा करती है।

❀ गो-रक्षा दृश्य ❀

(अदालती कार्रवाई)

अदालत तहसील चुरू

हम नीचे दस्तखत करने वाले, पूज्य श्री महाराज जवाहिर-लालजी के दर्शनों के लिये मेवाड़, मारवाड़, गुजरात तथा

काठियावाड़ से यहां आए हुए हैं। हम लोगों का मुख्य धर्म अहिंसा है। यहां पर जो गौवें फाटक में रक्खी जाती है और जिस कदर चार छः आना फी गाय नीलाम की जाती है और इस पर भी इस प्रान्त में घास की बहुत कमी दिखलाई पड़ती है जिससे इन गायों का सुख से निर्वाह होना हम लोगों को बहुत कठिन मालूम होता है। इन सब बातों को मद्दे नजर रखकर और गो-रक्षा अपना मुख्य कर्तव्य समझ कर हम लोग यह अर्ज करना अपना फर्ज समझते हैं कि मेवाड और मारवाड़ में घास और जल बहुत इफरात से है और हम लोग इन गायों को अपने खर्च से वहां ले जाकर इनकी रक्षा करना चाहते हैं, और अर्ज करते हैं कि जिस कीमत पर दूसरों को नीलाम की जाती है उसी कीमत पर हम लोगों को दी जावें लेकिन शर्त यह है कि हम लोग सुनते हैं कि यहां से जो गौ बाहिर जाती है उस पर राज्य की तरफ से महसूल लिया जाता है। हम लोग करीब ५०० गायें लेजाना चाहते हैं जो हमारे निःस्वार्थ भाव से सिर्फ गो रक्षा के लिये लेजाना है। इस हालत में अगर श्रीमान् महसूल मुआफ फरमा देवें तो हम लोग उपरोक्त गायें ले जाने को तैयार हैं। सुनते हैं कि श्रीमान् महाराजाधिराज नरेन्द्र शिरोमणि श्री बीकानेर नरेश बहुत उदारचित्त एवं गोभक्त हैं। इसलिये हम लोग यह दरख्वास्त

पेश करके आशा करते हैं कि इस पर उचित विचार करके हम लोगों को बहुत जल्द हुक्म सादिर फरमावेंगे।

नोट—हम लोग यहां से जल्दी ही अपने वतन को जाने वाले हैं इसलिये हुक्म बहुत जल्दी सादिर फरमाया जावे ता० ३० सितम्बर सन् १९२६ ईस्वी.

द० वरधभाण, रतलाम. हीरालाल, खाचरोद. सरदारमल ओवर-सियर, उदयपुर. अमृतलाल जौहरी, बम्बई. रतनलाल महता, सञ्चालक जैन शिक्षण संस्था—उदयपुर. श्रीचन्द अब्बाणी, ब्यावर

रिपोर्ट तहसील चुरु व महकमा निजामत रेनी हुक्म राजगढ़

दरख्वास्त साहूकारान उदयपुर दरबार इसके कि फाटक की गायें उनको कीमत वेसी पर दी जावे मगर जकात नेसार मुआफ होना चाहिये।

जनाब आली

चंद साहूकारान रियासत उदयपुर पूज्य महाराज श्री जवाहिरलालजी के दर्शनार्थ चुरू आए हुए हैं। वे फाटक की गायें खरीद करके मेवाड़ में लेजाना चाहते हैं। उनकी ख्वाहिश

गायों से व्यापार करने की नहीं है बल्कि वहां पर घास-पानी
ज्यादा है। इसलिये धर्मार्थ लेजाना चाहते हैं। मैंने उनको
समझाया था कि वे कम नुजक मजूर रवाना व चराई फी नग
अदा करें मगर वे नीलाम की बोली पर ही खरीदना चाहते हैं।
इलाका तहसील हाज़ा में वारिश की कमी है जिससे पैदावार
घास बिलकुल नहीं है, इसलिये खरीददार नहीं हैं। ये लोग
इस शर्त पर गायें लेजाना चाहते हैं कि उनको ज़कात नेसार
न लगना चाहिये, जिसकी मुआफी श्रीजी साहिब बहादुर दाम
इकबालहु की गवर्नमेण्ट के अख्तियार में है सो रिपोर्ट हाजा
मय दरख्वास्त महकमह बाला होकर अर्ज है कि मुनासिब हुक्म
से जल्द इतला बख्शाई जावे।

दरख्वास्त नं० ११६५.

ता० १-१०-२९ ईस्वी-

आइ जज सवर

सहवन आया। तहसील चुरू में वापस हो तारीख ४
अक्टूबर सन् १९२९ ईस्वी नं० ६३९.

तहसील चुरू

ये कागजात जरिये रिपोर्ट ता० १-१०-२९ ईस्वी के
वास्ते हुक्म मुनासिब महकमे वाला निजामत रेनी मुकाम राजगढ़

भेजे गये थे, जो अदालत साहब रिस्ट्रेक्ट में मालूम नहीं किस तरह चले गये जो आज की डाक से अदालत मोसूफ से आज की डाक से सादिर हुए लिहाजा असल कागजात बदस्त महता रतनलालजी महकमह बाला निजामत रेनी मुकाम राजगढ़ में पेश होकर गुजारिश हो कि मुताबिक रिपोर्ट सरिश्ते हाजा ता० १ अक्टूबर १६२६ मंजूर फरमाया जावे।

निजामत रेनी

रिपोर्ट तहसीलदार साहिब चुरू मुफस्सिल व मुनासिब है। कमी बारिश की वजह से चारे की पैदावार नहीं हुई इसलिये फाटक के मवेशियान के खरीददार नहीं मिलते और जिन गरीब रिआया के पास चारा नहीं है उन्होंने भी अपनी गायों को आवारा छोड़ दिया है। अक्सर जो मवेशी फाटक की नहीं बिकती थीं वे गोशाला में भेज दी जाती थीं मगर चारे की कमी की वजह से गोशाला भी अब नहीं लेती सायलान मोआज़िज़ व खास राज्य उदयपुर के हैं। ये लोग अपने खर्चे से ५०० गायें या जितनी लेजा सकें लेजाने की इजाजत चाहते हैं और जो ५) फी मवेशी नेसार महसूल लगता है उसकी मुआफी चाहते हैं। मेरी राय में यह महसूल मुआफ फरमाया जाना मुनासिब है। नीलाम में ये लोग मवेशी फाटक से खरीद

लेवेंगे आयन्दा ये राजगढ़ पारेनी के फाटक की मवेशियान खरीदने का भी इरादा करते हैं जिनके भी खरीददार नहीं है। अर्ज़ ऐसी व ख़ास इन सायलान के लिये जनरल मंजूरी बाबत मुआफी महसूल नेसार फरमाई जाकर इत्तिला दी जावे। यह रिपोर्ट मैं दस्ती रतलालजी महता के साथ भेजता हूं।

ता० ११-१०-१६२६ ईस्वी. नं० ७६२६.

उदयपुर में गो-रक्षार्थ उत्साह

बीकानेर-तहसील से ऊपर मुआफिक लिखा पढ़ी जारी रख कर हमने एक कागज उदयपुर श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी की सेवा में भेजा। उसमें हमने पूरा व्यौरा लिख भेजा। श्रीमान् कोठारीजी साहिब ने वह कागज उनके कुंवर साहिब श्री गिरधारीसिंहजी साहिब के साथ श्री बड़े हजूर श्री जी हजूर स्वर्गीय महाराणा साहिब फतेसिंहजी बहादुर की सेवा में मालूम करने के लिये भेजा। उन्होंने तुरन्त ही उसको हिन्दुवा सूर्य्य के चरणारविन्दों में नजर करके और मारवाड़ के थली प्रान्त की गायों की दुर्दशा मालूम की। उस पर कुंवर साहिब को हुक्म मिला कि वे क़िसी को भेज इसकी जांच करें सो

गौ-भक्त श्रीमान् कोठारीजी साहेब बलवन्तसिंहजी भूतपूर्व प्रधान ७५

उन्होंने (श्री मेघराजजी खिमेसरा व ठाकुर देवीसिंहजी व धाबाई को) गायों को देखने के लिये धाबाई वगैरा को चुरू भेजा। सब देख चुकने के बाद घास के लिये लिखा गया तो श्रीमान् कोठारीजी साहिब ने उदयपुर से एक डिब्बा घास उन गायों के लिये चुरू भेजा और गायों को जल्दी छुड़ाने की कार्रवाई करने के लिये पत्र लिखा।

इसके पश्चात् हम तहसील के कागजात लेकर बीकानेर गये। वहां हम कौन्सिल रेवेन्यू ऑफिसर व कस्टम्ज हाकिम के पास गये तो उन महानुभावों ने बड़ी सहानुभूति के साथ उन कागजों पर लिखा पढ़ी करके उनको महकमह खास में भेजा।

हम महकमा खास के प्रत्येक अफसर से मिले और जनाब प्राइम मिनिस्टर साहिब सर मन्नूभाई से मुलाकात की। आपने हम से बात-चीत करने में बड़ी दिलचस्पी ली। और श्रीमान् महाराजाधिराज नरेन्द्र बीकानेर से प्रार्थना करके २०००) रुपये मुआफ करा कर फाटक से गायें लेजाने की आज्ञा कस्टम व तहसील राजगढ़ को देदी जिनकी नकलें पाठकों की जानकारी के लिये दी हैं।

सफलता

हुक्म डिपार्टमेण्ट राज्य श्री बीकानेर

नं० ४०१८६२ सायर चुरू

जो कि महता रत्नलालजी साहब उदयपुर ५०० गौ चुरू से इलाके गैर में नेसार करना चाहते हैं जिनकी नेसार जकात व हुक्म साहिब प्राइम मिनिस्टर मुआफ फरमाई गई है लिहाजा जरिये हाजा तुमको लिखा जाता है कि महता रत्नलालजी को ५०० गायें चुरू से बिला अदाय नेसार जकात लेजाने दीजावे। ता० १९-१०-१९२९ ईस्वी.

हुक्म महकमा कस्टम्ज राज्य श्री बीकानेर

नं० ४०१५०० सूबा सायर राजगढ़

जो कि महता रत्नलालजी साहब उदयपुर १०० गायें राजगढ़ से इलाके गैर में नेसार करना चाहते हैं जिनकी नेसार जकात व हुक्म साहिब प्राइम मिनिस्टर मुआफ फरमाई गई है लिहाजा जरिये हाजा तुमको लिखा जाता है कि महता रत्नलालजी को १०० गायें राजगढ से बिला अदाय नेसार जकात लेजाने दी जावें। ता० २९-१०-२९ ई.

गो-रक्षा का अपूर्व दृश्य

श्रीमान् बीकानेर नरेश का गायें ले जाने का हुक्म पाकर हम लोग तहसील चूरू में पहुंचे। हुक्म को वहां देकर ३०९ गायें छुड़ालीं। अब इन दुबली पतली अधमरी भूखी गायों का समूह उस कैदखाने से निकाल कर बाज़ार होता हुआ सेठ सीपाणीजी के नोहरे में लाया गया। गायें प्रसन्नता से रंभा रही थीं और हम संतोष से सांस ले रहे थे। आज हमको दो महीने की दौड़ धूप का फल मिला था। इस जीव रक्षा में कितना आनन्द है। इसको हिंसक तथा **हिंसा से प्रेम रखने वाले प्राणी कैसे जान सकते हैं ?**

इस अपूर्व दृश्य को देखने के लिये हजारों मनुष्य इकट्ठे हो रहे थे। सबके मुंह से येही शब्द निकल रहे थे कि आज पूज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज के उपदेशों का फल है। आज इतने जीवों की रक्षा होकर सच्चा पुण्य हुआ है। **बहुत से मनुष्य लक्षाधीश दया-दान विमुख व्यक्तियों को लानत दे रहे थे और कह रहे थे कि यदि गायों की रक्षा करना तथा मरते को बचाना इनके धर्म में होता तो आज थली प्रान्त की इतनी गायों की रक्षा हो जाती।** कोई कह रहे थे कि चूरू

शहर के कोठारीजी मूलचन्दजी, महालचन्दजी, चम्पालालजी, मदनचन्दजी इत्यादि को धन्यवाद है कि जो पहिले गायों की रक्षा करना पाप समझते थे परन्तु आज पूज्य श्री के उपदेश से उन्होंने अपनी मिथ्या टेक छोड़ दी है और अब गायों की रक्षा कर रहे हैं।

कई गायों की हड्डियां निकल रहीं थीं। भूख और दुर्बलता के कारण उनसे चला नहीं जाता था। उनकी यह दशा देख कर बहुत से दयालु पुरूषों की आखों से अश्रुपात हो रहा था। परन्तु कुछ अद्भुत खोपड़ी वाले पुरुष कह रहे थे कि इन लोगों ने इनको छुड़ा तो लिया है परन्तु इनको घास पानी डालने में कितना पाप लगेगा। अफसोस! ऐसे मनुष्यों की 'हठधर्मी को'। वे लोग हमारे इस पुण्य कर्म को देख कर दुखी हो रहे थे परन्तु उनको जवाब देने वाले भी मौजूद थे। चूरू के कुछ ब्राह्मण, अग्रवाल तथा सुनार आदि दया प्रेमी व्यक्ति उनको जवाब देकर लज्जित करने में नहीं चूकते थे।

इस प्रकार गायों को उस नोहरे में रक्खा गया और घास पानी डालने लगे। इस दृश्य को देखने के लिये बहुत से आदमी वहां पर एकत्रित होने लगे और बहुत से आदमी अपनी गायों को मुफ्त ही में दे गये।

जब लोगों ने सुना कि कोठारीजी साहिब महालचंदजी जो पहिले तेरहपन्थी थे परन्तु अब गायों को खाना-पीना दे रहे हैं और इसीसे वे इस 'रक्षा-समिति' के प्रेसिडेण्ट चुने गये हैं, तो बहुत से आदमी उनके इस पुण्य कर्म को देखने के लिये पहुंचने लगे। हमारे तेरह पंथी भाइयों नें भी हमें दो गाये रक्षा के लिये दीं इसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं।

इसी तरह आठ दस दिन तक अच्छा खाना पीना मिलने पर वे गायें कुछ २ स्वस्थ हो गईं और चलने फिरने योग्य हो गईं तब हमने उनके लिये उदयपुर श्रीमान् कोठारीजी साहिब को लिखा कि मारवाड खुश्की के रास्ते लाने में खर्चा कम होगा मगर गायें दुबली व बहुत दिनों की भूखी होने से तकलीफ से पहुंचेगी उसके उत्तर में श्रीमान् का हुक्म रेल में लाने का आया जिसमें लिखा कि गायों को किसी तरह की तकलीफ न हो और आराम से मेवाड़ में पहुंच जावे। श्रीमान् की इस तरह आज्ञा देने के हाल को पढने से पाठकों को ज्ञात होगा कि श्रीमान् कोठारीजी साहिब का गायों के प्रति कितना आगाध प्रेम है ? इस कृपा का धन्यवाद हम श्रीमानों को किस जबान से धन्यवाद दे सकें। आप ही का कृपा से गायें आराम के साथ मेवाड़ भूमि में पहुंचाई गईं जिसका वर्णन आगे दिया गया है।

'वह जलूस'

यद्यपि रेल के रास्ते लाने में खर्चा बहुत लगता था मगर गायों की हालत नाजुक थी इसलिये उनके स्वास्थ के लिहाज से रेल के रास्ते ही लाना उचित मालूम हुआ। अतः इन गायों को लेजाने के लिये हमने स्पेशल के ५० डिब्बे चुरू स्टेशन पर मंगवाये और उनकी हिफाजत के लिये आदमी नौकर रख दिये। डिब्बों में खूब घास दाना व पानी का प्रबन्ध किया गया। इसके अतिरिक्त पत्र देने पर अजमेर व मांडल स्टेशन पर घास पानी का प्रबन्ध किया गया।

जब गायों की स्पेशल रवाना हुई तो दर्शकगण की भीड़ गद्गद हो उठी। स्टेशन-स्टेशन पर दर्शकगण उन गायों को देखकर आनन्दित होते थे। माहली स्टेशन तक प्रत्येक स्टेशन के लोग क्या हिन्दू क्या मुसलमान सभी ने गायों का दर्शन किया और उनको पानी पिलाया। इस प्रकार माहोली स्टेशन पर गौएँ आ पहुंची।

माहोली स्टेशन पर

स्टेशन माहोली पर गायें उतारी गईं। वहां पर श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी व कुंवर साहिब गिरधारीसिंहजी

ने गायों के उतारने व घास का पूरा प्रबन्ध कर रखा था। डिब्बों से गौयें सावधानी के साथ उतारी गईं और मेवराजजी साहिब खिमेसरा ने गिना कर उनको कपासन निवासी नायब हाकिम साहब मोतीलालजी भंडारी के सुपर्द की। उन्होंने गायों के आराम का खूब प्रबंध कर दिया। चुरू से जो लोग गायों के साथ आए थे उन्होंने गायों का यह स्वागत व मेवाड़ के घास पानी की चर्चा चुरू जाकर की जिससे सब लोग धन्यवाद देने लगे।

हिन्दवा सूर्य का गौरक्षा से प्रेम

श्री स्वर्गीय मेवाड़ाधीश की सेवा में श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी ने मालूम की कि थली प्रान्त की गायें माहोली आगई हैं। इस पर श्रीमानों ने और स्वयं * नाहर मगरे पधार कर माहोली से सब गायों को नाहर मगरे मंगवाने का हुक्म बक्षा। महलों के चौक में मंगवा कर गायों के बीच पैदल पधार कर प्रत्येक गाय का निरीक्षण किया। यहां यह प्रकट करना भी अतिशयोक्ति रूप में न होगा कि श्रीकृष्ण महाराज ने जिस प्रकार गोकुल में जाकर जिस प्रेम-दृष्टि से

उनको देखा उसी प्रकार 'आर्य-कुल-कमल-दिवाकर' हिन्दवा सूर्य्य महाराणा साहिब फतहसिंहजी बहादुर ने अपनी प्रेम-भरी-दृष्टि से उन गायों को देखा। उस समय के देखने वाले कहते हैं कि निःसन्देह दयालु महाराणा साहिब को देखकर वे मूक पशु उस समय अपनी मौन वाणी में गर्दन हिलाते हुवे जय जयकार करते हुवे जान पडते थे।

श्रीमानों ने गायों को देखकर फरमाया कि इनमें से १०० गायें तो ऐसे ब्राह्मणों को दी जावे कि जो इनकी देख भाल भली भांति कर सकें। शेष गायें वापस माहोली भेज दी गई।

इन गायों को देखकर यहां के निवासियों ने बड़ा आनन्द मनाया। बात दरअसल यह है कि मेवाड़ के राजा तथा प्रजा सब ही गो-भक्त हैं। हमारे यहां गायों के लाठी पत्थर तक मारने की आज्ञा नहीं है। मेवाड़ निवासी गायों को ही अपनी सम्पत्ति मानते हैं। गायों के हिंसक महसूल चुका कर किसी गाय को मेवाड़ के बाहिर नहीं लेजा सकते।

मेद पाटेश्वर महाराणा साहिब गो-रक्षक ही नहीं, किन्तु जीव मात्र के रक्षक हैं। मेवाड़ में राज्य से गाय, बैल, बकरी, कबूतर, मोर, बन्दर, मछलियां इत्यादि जीवों को नहीं मारने के हुक्म जारी हैं। हजारों कबूतरों व पक्षियों को महलों में दाना

हिन्दू धर्म-रक्षक स्वर्गीय महाराणा साहिब श्री फतहसिंहजी बहादुर.

मिलता है। यहां तक कि इन जीवों के रहने का स्थान भी खास महलों में है। महलों में व और भी किसी जगह आपके सामने आये हुवे जीव को कोई सता नहीं सक्ता था। महलों में मधु मक्खियें व बरैं (टांटिये) छत्ता लगा देते हैं तो उनको भी नहीं मारने देते। हाथी, घोडे, बैल वगैरह पशुओं को आप स्वयं पधार कर निरीक्षण करते रहते हैं। यदि उनको किसी प्रकार की तकलीफ मालूम होजावे तो सबसे पहिले उनके आराम का प्रबन्ध करते हैं।

श्रीमान् की जब सवारी निकलती तो पहिले रास्ते में छोटे बड़े यहां तक कि कीड़े मकोड़े पड़े हों तो सबको बचाकर चलने का हुक्म होता है और इसका पूरा प्रबन्ध पहले से ही रहता है। रात में रोशनी पर कपड़े की खोरियें पहिनाई जाती हैं।

श्रीमान् की आज्ञा है कि प्राणी-मात्र मेरे राज्य में सुखी रहें। इस राज्य में वर्ष में कई 'अगते' रक्खे जाते हैं जिनमें कसाई, कलाल, कन्दोई, भडभुंज्ये, तेली वगैरह अपना २ व्यापार बन्द रखते हैं।

इस प्रकार मर्य्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्रजी की गद्दी की मर्य्यादा का पालन पूर्णरूप से करते हैं। ऐसे प्रतापी, दयालु नरेश महाराणा साहब के गुणों का वर्णन करना शक्ति से बाहिर है।

* श्रीएकलिंगजी * श्रीरामजी *

श्रीमान् श्री वैकुंठवासी श्री   श्री बड़ा हजूर बीकानेर की तरफ सूं अकाल पीड़ित गायां मेवाड़ में मंगाई जिण विषय की कविता निम्न प्रकार है:—

कविता

❀ मनहर ❀

विक्रम के संवत उनीस औ छियासी माहि
तृण दुरभिक्ष भयो जांगल विदेस में ।
कामदुधा भारत की सरवस्व माता रूप-
सुरभी मरन लागी भूख के क्लेश में ॥
सनातन धर्म के सु-रक्षक दयालू फता-
गोकुल बचायो धन्य मंगा निजदेस में ।
गोकुल उबारि कृष्ण कहाये गोपाल तबे-
मानौ अवतार वही गौपालक वेस में ॥१॥

रचियता—

दधिवाडिया करनीदान.

———

इश्तिहार अज़पेशगाह राज्य श्री महकमा खास श्री दरबार राज्य मेवाड़ महकमा कार्तिक सुदी १३ सं० १६८३ ता० १७-११-१६२६ ई.

नं० ७३४१

दस्तखत प्राइम मिनिस्टर.

व सिलसिले इन्तजाम फरोख्तगी मवेशियान जरिए हाजा हरखास व आम को आगाह किया जाता है कि इलाके मेवाड़ में से गायों की निकासी तो कतई बन्द ही है, और मुल्तानी मकराणी वालदिये, कसाई व सांसी वगैरा बिना जाने लोगों को दीगर मवेशी भी बेचने की मुमानिअत कीगई है। इसलिये मुन्दर्जा सदर कोमों के लोग मेवाड इलाके में मवेशी खरीदने के लिए नहीं आवें। उनको मवेशी नहीं बेची जावेंगी, और उन्हें नुकसान उठाकर जेरबार होना पडेगा।

गो-वंश पालक

जन्म से जीवन लीला संवरण पर्य्यन्त जिन्होंने गो-वंश, गो-भक्त और गो-सेवकों का प्रतिपालन किया, और बीकानेर

से लाई हुई भूखों मरती गायों को अपनी रियासत में स्थान दिया, और जिन्होंने इनमें से १०० गायें ब्राह्मणों को दान में दी उन स्वर्गीय प्रातः स्मरणीय हिन्दवां सूर्य्य, आर्य्य-कुल-कमल-दिवाकर महाराणा साहिब श्री १००८ श्री फतहसिंहजी बहादुर के चरणों में मेरी श्रद्धाञ्जलि अर्पण है।

गो-ब्राह्मण-प्रतिपालक पिता श्री के उत्तराधिकारी सुपुत्र गो-ब्राह्मण-प्रतिपालक, मेवाड़ाधिपति, दयालु महाराणा श्री भूपाल-सिंहजी बहादुर जिन्होंने क्षुधार्त्त बीकानेर रियासत से आई हुई गायों की रक्षा के लिये ४०००) रुपये प्रदान किये और गायों के प्रति अगाध प्रेम होने से गोशाला में दूर देशों की अच्छी नसल की गायों को मंगाकर उनको हर प्रकार का आराम पहुंचाने के प्रबन्ध के अलावा मेवाड़ की गायों व बैलों को आराम पहुंचाने का सदा ध्यान रहता है। अतएव ऐसे दयालु नरेश के पद पङ्कज में श्रद्धाञ्जली भेंट है।

आवश्यक सूचना

चूरू से मेवाड में गायें लाई गईं जिनमें से १०० गायें तो आर्य्य-कुल-कमल दिवाकर मेद पाटेश्वर श्री बड़े हजूर ने ब्राह्मणों को दीं, और जिन सज्जनों ने चन्दा जमा

हिन्दूपति महाराणा साहिब श्री भूपालसिंहजी बहादुर.

कराया उन्होंने जीव रक्षा के निमित्त ली और बाकी गायें रहीं उनको श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी ने गरीब लोगों को प्रदान कीं। तथा बीमारी से जो गायें मरीं उनकी खालों के १०१) रु० जमा हुवे। क्योंकि इस वर्ष पशुओं में बीमारी का प्रकोप होने से कुछ गायें मर गईं थीं। अब कोई गायें या बछडे बाकी नहीं हैं।

सहायता प्रदान करने वाले सज्जनों की शुभ नामावली

४०००) श्रीमान्-श्री-बडे हजूर दाम इकबाल हू (स्वर्गीय महाराणा साहिब) रियासत मेवाड़ ने मारफत-कोठारीजी साहिब बलवन्त-सिंहजी के अता फरमाये सिक्का कलदार

८७२॥।) उदयपुर के सज्जनों ने गायें खरीदने व रत्ता के लिये रुपये दिये जिनकी नामावली

१००) श्रीमान् महाराजा साहिब करजाली श्री लछमणसिंहजी साहिब

५१) श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी

१५०) श्रीयुत् खेमपुर ठाकुर साहिब करणीदानजी दधवाड़िया

२५) श्रीयुत् कन्हैयालालजी चौधरी (कलदार)

२५) ,, पारखजी किशनदासजी (कलदार)

२५) ,, मुनीमजी केवलचन्दजी

३५) हस्ते लालाजी साहिब केशरीलालजी

२५) विना नाम ,, ,, (कलदार)

२५) श्रीयुत् कीरतसिंहजी बावेल

२५) ,, बाबू रामचरणलालजी

२०) ,, अम्बालालजी खेमलीवाला

२५) ,, कन्हैयालालजी जड़िया (कलदार)

२०) ,, रतनलालजी बरसावत (कलदार)

२०) ,, नाथूलालजी डूंगरवाल

१६॥)॥ जोशण भाणी बाई १३) कलदार, ६॥)॥ उदयपुरी

१०) श्रीयुत् चम्पालालजी वरड़िया

१५) ,, कल्याणमलजी सिंगवी

१५) ,, केशुलालजी ताकड़िया

१३।॥-) ,, धनराजजी चण्डालिया

१०) ,, जवारमलजी सिंगवी

१०) ,, सेंसमलजी जीतमलजी बावेल

१०) ,, नंदलालजी खिंगटवाड़िया

१०।-) ,, खूबीलालजी वरड़िया

१२) ,, उरजणलालजी स्वरूपरिया

७) ,, उदयलालजी चेलावत की माता व स्त्री

५) ,, देवीलालजी वरड़िया

५) ,, महताजी साहिब जोधसिंहजी की पत्नी

५) ,, चाँद बाई

५) श्रीयुत् रतनलालजी स्वरूपरिया

५) ,, चुन्नीलालजी भादव्या

५) ,, कन्हैयालालजी सेठ (गोगुन्दावाला)

११) ,, हगामीलालजी खाब्या

५) श्रीयुत् मोतीलालजी हींगड़
२) लखारण चंपा
२) सूरज बाई पोखरणा
२=) लुहार इन्दजी
२) कानजी की माता (बीकानेर वाला)
१) उदयलालजी सा० चेलावत के रसोई बनाने वाली ब्राह्मणी
२) श्रीयुत् अम्बालालजी कोठारी
१०१) खालें बेचाव खाते जमा गायें बीमारी से मरगईं जिनके आये
४।=)।।। वत्ती खाते जमा कलदार ११६) बटाए जिनकी वत्ती के
६।।)।।। बाल्टियें नीलाम कीगई जिनके आये सो जमा

८७२।।।)

२१६१।) चुरू में चन्दा मंडा सो जमा
२०१) श्रीयुत् सेठ साहिब ताराचन्दजी गेलड़ा मद्रास निवासी हस्ते खुद के १०१), माताजी के ५०), धर्म-पत्नी २५), बाई सोहन २५)
५१) श्रीयुत् अमरचन्दजी वर्द्धमानजी साहिब रतलाम
५६) ,, अमृतलालजी रायचन्दजी ,, जौहरी बंबई
५१) ,, लालचन्दजी स्वरुपचन्दजी खाचरोद
२५) श्रीमती चम्पाबाई जौहरी बंबई
११) श्रीयुत् माणकलालजी जरसी बंबई
५) श्रीमती पारुबाई बम्बई

१४) श्रीयुत् रूपचन्दजी ११), चम्पालालजी ३) खाचरोद

२५) ,, डालचन्दजी मालू की धर्म-पत्नी

३०१) ,, बदनमलजी साहिब बांठिया भैरूंदानजी साहिब गोलेछा बीकानेर वालों ने फाटक में से गायें छुड़ाने तावे दिये।

५१) ,, मानमलजी सूराणा नयाशहर (ब्यावर)

५१) ,, खेमचन्दजी पुंगलिया

२००) ,, खेमराजजी नयाशहर

२२०) ,, ताराचन्दजी गेलड़ा मद्रास की मारफत

२००) ,, भैरूंदानजी गोलेछा के हस्ते

२२६।) ,, तनसुखदासजी हीरावत देशनोक

५००) ,, विजयराजजी चांदमलजी १००), फतहचन्दजी ४००) बीकानेर

२१६१।)

१७८८≡)।।। बीकानेर में चन्दा हुआ जो भैरूंदानजी साहिब सेठिया ने महालचन्दजी साहिब कोठारी के पास भेजे सो जमा

६००) श्रीयुत् उदयचन्दजी डागा की धर्म-पत्नी

३६७।) धर्म ध्यान करने वाली बाइयों की ओर से

१००) श्रीयुत् चुन्नीलालजी चौथमलजी कोठारी

११) ,, मगनमलजी कोठारी

१५) ,, फूलचन्दजी पुंगलिया की बहू

२५) ,, हीरालालजी मुकीम की बहिन

२५) ,, लाभचंदजी तातेड़ की बहू

१००) श्रीयुत् अभयराजजी खजाची की वहू
१००) ,, हजारीमलजी मंगलचंदजी मारू
५०) ,, जेठमलजी सेठिया की धर्म-पत्नी
२००) ,, शिखरचंदजी बेंचरचंदजी रामपुरिया
२) ,, छगनलालजी नाएटा की बहू
७) ,, मुन्नीलालजी दसाणी की बहू
१) छगनीबाई मालगा
६६) एक जैनी गायां ३३ बावत हस्ते भैरूंदानजी साहिब सेठिया
२५) श्रीयुत् माणकचंदजी सेठिया
६) ,, रावतमलजी बोयत्रा की वहू
३) ,, छगनलालजी कोठेड़
३१) ,, नेमीचंदजी सुखलेचा
५०) ,, फकीरचंदजी पेमचंदजी
३।।।≡)।।। ,, हुंडावण का

१७८८≡)।।।

१००) श्रीयुत् श्रीचंदजी अब्वाणी नयाशहर
१७६) फलोदी से चन्दा होकर आया सो जमा
६७।।।≡) चुरू रेलवे में महसूल ज्यादः लेलिया जिसकी कार्रवाई करने पर उन्होंने जरिये मनीऑर्डर रुपये भेजे सो जमा

६२२६=)।।।

हिसाब अतु खर्च

१८१॥।=)॥ चुरू में गायों के घास व रुपयों के प्रबंध के लिये श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी की सेवा में निवेदन किया गया तो वहां से इन्तजाम हुआ जिसमें खर्च—

११=) नोट भेजा व तार देने में खर्च हुए

१७०॥।)॥ घास की गांठें ७१॥ऽ२ उदयपुर से चुरू भेजी जिनकी कीमत के जंगलात वालों को ८१॥।)॥ व रेल किराया ८६)

———

१८१॥।=)॥

५३०६।=) उदयपुर से श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी ने मेघराजजी साहिब खिमेसरा, ठाकुर देवीसिंहजी धाभाई वगैरह को चुरू भेजे जो गायें खरीद कर लाये जिसमें खर्च हुवे—

३७१) गायें नग ३०६ चुरू की कचहरी फाटक से छुड़ाई जिसके जमा कराये ३०१) व चुरू शहर से गायें ली ७०)

२६≡) गायों के पानी पिलाने के लिये बाल्टियें २० १४॥=), रस्से ११।≈), ताला ≡) वगैरा खरीद में

२६०॥।-)। फाटक में से गायें व शहर की गायों को कार्तिक वदी २ से कार्तिक वदी १० तक घास पाला नकाई का

२॥=) गायों के लिये उदयपुर तार दिलाने वगैरा में

४६४८॥≡)॥। रेल महसूल, गायें डिब्बे में भराई नौकरों को तनख्वाह वगैरा में खर्च

३७॥।-) गायें चुरू से स्टेशन चुरू लेजाकर चुरू के आदमी रखे सो डिब्बों में चढ़ाई का महनताना व स्टेशन वालों को इनाम

५८।≡)॥। उदयपुर से गायें लेने के लिये आये सो आने जाने का रेल किराया व भोजन खर्च

४४००) स्टेशन पर ५० डिब्बों के महसूल के फी डिब्बा ८८) से

१५२।≡) गायों के लिये आदमी नौकर रखे वे चुरू से माहोली (मेवाड़) स्टेशन तक आये जिनको तनख्वाह व पीछे जाने का रेल महसूल दिया

४६४८॥≡)॥।

५३०१।=)

१००॥।=)। रतनलाल महता हस्ते खर्च हुवे

३८।≡)॥ गायों के इन्तजाम के लिये चन्दा व हुक्म अहकामात हासिल करने के लिये बीकानेर, राजगढ़ रतनगढ़, सरदार शहर, जोधपुर और फलोदी में भ्रमण किया जिसमें खर्च के साथ सिर्फ नौकर

के रेल महसूल १६।=)।, भोजन खर्च ३।।।=)।।, तनख्वाह के दिये १५=)।।।

५६।=)।।। कार्तिक बदी १० गायें जाने से बाकी रहीं जिनको मगसर बदी ४ तक घास नकाया जिसमें खर्च हुवे

३) गायें चराने व इकट्ठी करने के लिये आदमी नौकर रखे जिनको दिये

१००।।।=)।

४६४≡) चुरू से स्टेशन माहोली गायें आईं जिनके घास दाणा पानी वगैरा के लिये आषाढ़ तक श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी ने इन्तजाम किया जिसमें खर्च का लगा

६७६।।।-)। चुरू में गायें इकट्ठी कराईं गईं जिनके खर्च का इन्तजाम कोठारीजी साहिब महालचंदजी ने किया और उन गायों को नयाशहर के खेमराजजी लेगये जिसमें खर्च हुवे

५४६।।।=)।। घास पालो चुरू में खरीद कर गायों को डलाया

४१।)।।। गायों की सम्भाल पर आदमी रखे जिनकी तनख्वाह के दिये

३८८।।=) नयाशहर निवासी खेमराजजी सा० गायें डिब्बों में लेगये सो उनके हस्ते खर्च हुए

६७६।।।-)।

२४४।।।=) श्रीमान् कोठारीजी साहिब बलवन्तसिंहजी की मार्फत अमारिया वगैरा जानवरों के रहने के लिये मकान बनवाने तावे जीव दया के लिये खर्च हुए

१४५)॥। गोरक्षा के लिये भ्रमण कर महसूल मुआफ कराने में व चन्दा वगैरा के लिये जाने आने में गोरक्षा की पुस्तकें छपाने भेजने में ३१३)॥। खर्च हुए जिस मद्दे १५८) इस शुभ काम में रतलाल ने दिये बाद बाकी सरे।

७४५६-)॥।

१७७०-) श्री पोते रहे जो चुरू महालचन्दजी साहिब कोठारी की दूकान पर जमा हैं जिसके लिये सं० हाल में मुकाम बीकानेर पूज्य श्री हुक्मीचंदजी महाराज के हितेच्छु श्रावक मंडल की कमेटी हुई जिसमें यह तजवीज तै पाई कि १७७०-) कोठारीजी साहिब महालचंदजी की दुकान पर जमा रहें और ये रुपये जीव दया के काम में कमेटी की राय से खर्च होवें। जब तक रुपये खर्च न होवें, तब तक व्याज उपजा कर चुरू कोठारीजी साहिब जमा बांधे और रुपये रतनलाल महता खाते दुकान पर जमा हैं सो नामे मांड मंडल कमेटी का जमा करें। व्याज उपजे जिसकी इत्तला मंडल कमेटी में भेज दी जावे। यदि किसी कारण से व्याज न उपजे तो मंडल कमेटी रतलाम लिख देवे ताकि व्याज उपजाने बाबत कमेटी मुनासिब कार्रवाई करेगी।

६२२६=)॥।

नोट—हिसाब की जांच की भँवरलालजी बाफणा

इसके बाबत कोई सज्जन कच्चा हिसाब देखना चाहे तो वह श्रीमान् कोठारीजी साहिब की हवेली और चुरू कोठारीजी साहिब महालचंदजी की दुकान पर देख लेवें।

'धन्यवाद'

बीकानेर गवर्नमेण्ट ने जो महसूल की मुआफी फरमाई और कार्यकर्ताओं ने सहानुभूति दिखलाई, तथा जिन जिन महानुभावों ने सहायता की और चूरू शहर के कोठारी सज्जनों ने जीव-रक्षा में धर्म समझ कर पूज्य श्री का चातुर्मास कराकर मरती हुई गायों की रक्षार्थ घोषणा की उन सब महानुभावों को सहर्ष कोटिशः धन्यवाद देता हूँ। बड़े हर्ष का विषय है कि भूख से पीडित गायों की सहायता के लिये चूरू में पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे हुए सज्जनों से गायों की सहायता के लिये चन्दा बाबत अपील की, और उदयपुर गायों की रक्षा बाबत अर्ज लिखी गई तथा बीकानेर, फलोदी जाकर सहायता बाबत कोशिश की तो सभी महानुभावों ने यथाशक्ति सहायता प्रदान की जिनकी शुभ नामावली 'जमाबन्दी रकम' की सूची से विदित होगी। रकम जो खर्च हुए बाद पोते रही जिसके लिये बीकानेर में 'मंडल' की कमेटी ने जो ठहराव किया वह हिसाब में दर्ज है। इस दान का कितना बडा महत्त्व है जिसका सब हाल रिपोर्ट पढने से पाठकगण को मालूम होगा कि पारस मणि के स्पर्श से लोहा भी सोना बन जाता है, उसी प्रकार गायों के प्रति प्रेम प्रदर्शित कर दान देने से

सैंकडों गायों को अभयदान मिला। इसलिये उन सब दानी महानुभावों को सहर्ष धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने इस शुभ कार्य में सहायता प्रदान कर गौओं की रक्षा की है।

आशा है कि जो तजवीज 'मंडल' की कमेटी ने तै की है उससे सब महानुभाव सहमत हो कर आइन्दा जीव-रक्षा के कार्य में हर समय सहायता प्रदान कर अनुगृहीत करेंगे।

जिन महानुभावों ने सहायता प्रदान की उन सज्जनों को ऊपर धन्यवाद दिया जा चुका है, परन्तु इसके अतिरिक्त निम्न लिखित सज्जनों को धन्यवाद देना भी पूर्ण आवश्यक है।

नया शहर निवासी खेमराजजी साहिब चूरू जाकर बाकी गायें लाये अतः आपको सहर्ष धन्यवाद दिया जाता है। मेघराजजी साहिब खिमसेरा तथा दूसरे सज्जनों ने भी इस काम में दिलचस्पी ली इसलिये आप सबको सहर्ष धन्यवाद देता हूँ।

'अन्तिम निवेदन'

सब दया प्रेमी महानुभावों की सेवा में निवेदन है कि जो अनाथ-रक्षा, गायें, बकरे अमरिया ताने कोई शुभ कार्य

में सहायता प्रदान करना चाहें वे "वर्द्धमानजी साहिब प्रेसिडेण्ट रतलाम मंडल" के पास भेज देवें। वे रुपये शुभ काम में खर्च किये जायंगे और हर साल हिसाब की रिपोर्ट प्रकाशित की जावेगी और वह दानी महानुभावों के पास भेज दी जावेगी। विशेष जानकारी के लिये जैन शिक्षण संस्था उदयपुर मेवाड़ पेरोकार जीवदया के नाम से पत्र व्यवहार करें।

निवेदक—

रतनलाल महता,

संचालक—जैन शिक्षण संस्था, उदयपुर मेवाड़.

जैन शिक्षण संस्था
का
संक्षिप्त विवरण

श्री जैन श्वेताम्बर साधुमार्गी शिक्षण संस्था उदयपुर में निम्न लिखित विभाग हैं। (१) श्री जैन ज्ञान पाठशाला, (२) सार्वजनिक पाठशाला, (३) श्री जैन कन्या पाठशाला, (४) श्री जैन ब्रह्मचर्य्याश्रम, (५) श्री महावीर पुस्तकालय।

१. श्री जैन ज्ञान पाठशाला में विद्यार्थियों को विद्वान सदाचारी, धर्म प्रेमी, बलवान बनाने की चेष्टा की जाती है। धार्मिक परीक्षा में श्री हुक्मीचंदजी महाराज के हितेच्छु

गौ-सेवक रत्नलाल महता उदयपुर.

श्रावक मंडल के कोर्स के अनुसार धार्मिक शिक्षा दी जाती है। और वहां परीक्षा देकर प्रमाण पत्र प्राप्त करते हैं प्राकृत की खास तौर पर शिक्षा दी जाती है। संस्कृत में व्याकरण की प्रथमा, साहित्य की प्रथमा-मध्यमा तक की पढाई कराई जाती है। अंग्रेजी में मेट्रिक तक की योग्यता करा दी जाती है। इसके अतिरिक्त मुनीमात (हिसाब परीक्षा) का कोर्स भी रक्खा गया है और औद्योगिक शिक्षा भी दी जाती है।

२. सार्वजनिक पाठशाला में उच्च जाति के बालकों को धार्मिक शिक्षा के साथ २ व्यावहारिक शिक्षा दी जाती है।

३. श्री जैन कन्या पाठशाला में कन्याओं को धार्मिक शिक्षा के साथ गृहस्थोपयोगी व्यावहारिक शिक्षा, सीना, पिरोना आदि सिखलाया जाता है।

४. ब्रह्मचर्य्याश्रम में सशुक्ल, अर्द्ध-शुक्ल, निःशुल्क तीनों प्रकार के विद्यार्थी प्रविष्ट किये जाते हैं।

५. महावीर पुस्तकालय—जोकि पाठशाला के कर्मचारियों और अध्यापकों की सहायता से स्थापित किया गया है। इसमें धार्मिक और नैतिक उत्तम २ पुस्तकों का संग्रह है।

पूर्ण विवरण संस्था की रिपोर्ट के पढने से ज्ञात हो सकता है। इस संस्था का सारा काम दानवीर महानुभावों की सहायता से चलता है।

इसके अतिरिक्त मेरी ओर से निम्न लिखित संस्थाएँ हैं। जिनकी आय-व्यय आदि का सम्बन्ध मेरा निजी है। (१) जैन

रत्न हुनरशाला, (२) उत्तम साहित्य प्रकाशक मण्डल, (३) जैन धर्म पुस्तकालय।

१. श्री जैन-रत्न हुनरशाला में स्वदेशी हर किस्म के कपड़े बुनने का, वटन बनाने वगैरा का काम सिखलाया जाता है। जो माताएँ व बहिनें सूत कात २ कर देती हैं, उनको पूरा मिहनताना दिया जाता है। बेकार व्यक्तियों को थोड़े समय में ही काम सिखला कर उद्यमी बना दिया जाता है। हर-किस्म के हाथ कते सूत से बिना चर्बी लगे हुए सुन्दर व मजबूत वस्त्र बनाए जाते हैं। इनकी बिक्री बंबई, मद्रास, मारवाड़, भूपाल, रतलाम, सैलाना, सरदारशहर, चुरू आदि स्थानों में भली भांति होती है। इसके अतिरिक्त हाल ही में उदयपुर में "भूपाल प्रदर्शिनी हुई जिसमें इस हुनरशाला के सामान को हिज हाइनेस महाराणा साहिब बहादुर तथा अन्य बड़े २ सज्जनों ने ५५५ तरह का कपड़ा निरीक्षण कर प्रसन्नता प्रकट की और इसके फल स्वरूप पहिली श्रेणी का प्रमाण-पत्र व सनातन धर्म महामंडल काशी से" शिल्प विशारद उपाधि आदि का मान-पत्र मिला है। हरएक महानुभाव को मेवाड़ में बने हुए स्वदेशी वस्त्र का प्रचार करना चाहिये। इसमें बना हुआ कपड़ा इतना मजबूत व सस्ता है कि एक साधारण मनुष्य १२) रुपया सालाना में अपना काम चला सकता है। जो कोई सज्जन एक साल भर पहिनने का कपड़ा मंगवाना चाहें वह २) रुपये पेशगी के साथ पूरे पते सहित ऑर्डर भेजे, ताकि उसके पास बाकी रुपयों की वी० पी० से माल भेज दिया जावेगा। साल भर पहिनने का कपड़ा इस प्रकार होगा। कमीज २ का

कपड़ा ६ वार, कोट २ का कपड़ा ७ वार, धोती जोड़ा १, टोपी १, थैला १, रूमाल १, पछेवड़ी १, तोलिया १, आसन १, पगड़ी १.

नोट—धोती जोड़े का अर्ज़ ४२ से ४८ इंच तक और कोट और कमीज के कपड़े का अर्ज़ २७ से ३२ इंच तक है।

२. जैन उत्तम साहित्य प्रकाशक मंडल-इसमें बहुत उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं। इसके अतिरिक्त निम्न लिखित पुस्तकें यहां मिल सकती हैं:—

(क) गच्छाधिपति पूज्य श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब के व्याख्यान संग्रह से पुस्तकें अहिंसा व्रत ।), सकडाल पुत्र की कथा ।=), धर्म व्याख्या, सत्यव्रत ≡), सत्य-मूर्ति हरिश्चन्द्र तारा ।).

(ख) उत्तम प्रकाशक मंडल से प्रकाशित पुस्तकें:—
जैन-धर्म प्रवेशिका =), जैन-धर्म शिक्षावली पहिला भाग)॥, जैन-धर्म शिक्षावली दूसरा भाग =), वरदान)॥, आत्म रत्न अनुपूर्वी -)॥. नित्य स्मरण -), जैन उत्तम स्मरण)॥।, उत्तम विचार)॥।, सुख शांति का उपाय =), कल्पवृक्ष -), शरीर सुधार)॥।, उत्तम कार्य के लिये चेतावनी (भेंट), मारवाड पंजाब भ्रमण (भेंट), संस्था की रिपोर्ट (भेंट), जैन-ज्ञान प्रकाश पहिला भाग, =), दूसरा भाग ≡), मेरी भावना)₋, जैन रत्न भजन संग्रह)॥ और भी पुस्तकें निकल रही हैं।

नोट—जो भाई अपने शहर व ग्रामों में धर्म पुस्तकालय स्थापित करना चाहें वे हमसे पुस्तकें मंगवावें, कारण कि हमारे यहां अन्य पुस्तकालयों से प्रकाशित हुई पुस्तकें सदा मौजूद रहती हैं। इसलिये पुस्तकें मंगवा कर अवश्य लाभ उठावें। पुस्तकों की पूरी सूची जैन ज्ञान प्रकाश द्वितीय भाग में है।

३. जैन धर्म पुस्तकालय—इसमें जैन-अजैन साहित्य व पुस्तकों का अच्छी संख्या में संग्रह है।

निवेदक—

रतलाल महता,

सञ्चालक—

श्री जैन श्वे. साधुमार्गी शिक्षण संस्था,

उदयपुर, (मेवाड़)